ISSN: 3049-2211

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

खंड-2 अंक- 2, फरवरी- 2026

Krishakmanch.com

कृषक मंच

मासिक कृषि पत्रिका

ISSN: 3049-2211

सम्पादक मंडल

डा. देवराज सिंह

मुख्य सम्पादक

सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष

सब्जी विज्ञान विभाग

कृषि विज्ञान विभाग, इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

प्रिया पाण्डेय

सहायक मुख्य सम्पादक

शोधार्थी

ए.के.एस. विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)।

सहायक सम्पादक

डा. विक्रमा प्रसाद पाण्डेय

पूर्व अधिष्ठाता (उद्यान महाविद्यालय)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. अरविन्द कुमार चौरसिया

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग (मेघालय)।

डा. महेन्द्र कुमार यादव

सहायक प्राध्यापक (सब्जी विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. वर्तिका सिंह

सहायक प्राध्यापक (फल विज्ञान)

आई.टी.एम. विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)।

डा. सचि गुप्ता

सहायक प्राध्यापक (पुष्प विज्ञान)

आ. न. दे. कृ. एवं प्रौ. वि.वि., कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)।

डा. रविकेश कुमार पाल

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

रामा विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)।

डा. सरिता

सहायक प्राध्यापक (पौध रोग विज्ञान)

आर.एन.बी. ग्लोबल विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)।

डा. रविशंकर

सहायक प्राध्यापक (कीट विज्ञान)

स.व.भा.प.कृ. एवं प्रौ. वि.वि., मेरठ (उ.प्र.)।

डा. देवेश तिवारी

सहायक प्राध्यापक (उद्यान विज्ञान)

पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, तूरा कैंपस (मेघालय)।

डा. कुमार अंशुमान

सहायक प्राध्यापक (मृदा विज्ञान)

के.एन.आई.पी.एस.एस., सुल्तानपुर (उ.प्र.)।

डा. मंजीत कुमार

सहायक प्राध्यापक

लिंगायस विद्यापीठ, फरीदाबाद, हरियाणा।

डा. विवेक पाण्डेय

सहायक प्राध्यापक (सस्य विज्ञान)

इनवर्टिस विश्वविद्यालय, बरेली (उ.प्र.)।

डा. कल्याण सिंह

स्वतंत्र लेखक

बांदा कृ. एवं प्रौ. वि.वि., बांदा (उ.प्र.)।

डा. शिवशंकर पटेल

शोधार्थी

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)।

ISSN: 3049-2211

विषय वस्तु

क्र.सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1	हरी-भरी फसलों के लिए नैनो मैजिक: नैनो-बायोटेक्नोलॉजी कैसे खेती में क्रांति ला रही है।।	4-7
2	कुसुम वृक्ष: जनजातीय जीवन का आधार।	8-11
3	मखाना खेती: बिहार की पहचान।	12-13
4	गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती की आवश्यकता और महत्व।	14-16
5	भारत में मछलियों के प्रमुख रोग: कारण और बचाव।	17-21
6	हाइड्रोपोनिक्स: आधुनिक कृषि में क्रांति।	22-27
7	मछली-सह-बतख पालन: नील-हरित अर्थव्यवस्था का स्वदेशी मॉडल।	28-33
8	गुड़ के स्वास्थ्य लाभ।	34-36
9	स्वस्थ अमरूद खुशहाल किसान: फल मक्खी नियंत्रण रणनीतियाँ।	37-38
10	एलोवेरा की बाजार में बढ़ती मांग।	39-41
11	कृषि उत्पादन में मौसम पूर्वानुमान की भूमिका।	42-45
12	गाय एवं गोबर खाद की उपयोगिता।	46-48
13	रिमोट सेंसिंग: फलों की खेती में नई क्रांति।	49-51
14	फसल उत्पादन में प्लास्टिक मल्चिंग की भूमिका।	52-56
15	जैव ईंधन: ऊर्जा का एक टिकाऊ तंत्र।	57-60

हरी-भरी फसलों के लिए नैनो मैजिक: नैनो-बायोटेक्नोलॉजी कैसे खेती में क्रांति ला रही है।

अनामिका नायक
(पी.एच.डी.)
राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दुर्गापुर, पश्चिम बंगाल

ग्रीन नैनो-बायोटेक्नोलॉजी सस्टेनेबल खेती में एक बड़ा बदलाव ला रही है। यह पौधों से मिलने वाले बायोडिग्रेडेबल नैनोमटेरियल को मिलाकर पानी की कमी, मिट्टी की उपजाऊ क्षमता में कमी, कीड़ों से बचाव, मौसम के बदलते पैटर्न और बहुत ज़्यादा केमिकल फर्टिलाइज़र/पेस्टीसाइड के इस्तेमाल जैसी बड़ी चुनौतियों का सामना कर रही है, जिससे पर्यावरण को नुकसान होता है और बायोडायवर्सिटी का नुकसान होता है। पारंपरिक नैनोटेक्नोलॉजी के उलट, ग्रीन तरीके इको-फ्रेंडली सिंथेसिस तरीकों से इकोलॉजिकल फुटप्रिंट को कम करते हैं, जिससे सटीक, टारगेटेड डिलीवरी सिस्टम बनते हैं जो फसल की पैदावार, पोषक तत्वों का अवशोषण, तनाव सहने की क्षमता और सामाजिक-आर्थिक रूप से फायदेमंद होने की क्षमता को बढ़ाते हैं और साथ ही प्रदूषण को भी कम करते हैं। कुल मिलाकर, नैनो-बायोटेक्नोलॉजी क्लाइमेट-रेसिलिएंट, रिसोर्स-एफिशिएंट और पर्यावरण के हिसाब से सस्टेनेबल खेती के सिस्टम बनाने के लिए एक बड़ा बदलाव लाने वाला समाधान है जो भविष्य की फ़ूड सिक्योरिटी की मांगों को पूरा करने में सक्षम है।

परिचय:

खेती दुनिया भर में खाने की सप्लाई की बुनियाद है और आर्थिक विकास और स्थिरता को बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती है। हालांकि, पानी की कमी, कीड़ों से बचाव, मिट्टी का उपजाऊ न होना, और केमिकल खाद और कीटनाशकों का गलत इस्तेमाल जैसी कई चुनौतियाँ खेती की सस्टेनेबिलिटी के लिए खतरा हैं। बहुत ज़्यादा क्लाइमेट चेंज पैटर्न और अनियमित बारिश इन चुनौतियों को और बढ़ा देती हैं। खेती के पुराने तरीकों से अक्सर इकोलॉजिकल असंतुलन और बायोडायवर्सिटी का नुकसान होता है, जिससे पर्यावरण खराब होता है। इस मामले में, ग्रीन नैनो-बायोटेक्नोलॉजी सस्टेनेबल खेती के लिए एक बदलाव लाने वाली टेक्नोलॉजी के तौर पर उभर रही है। ग्रीन नैनो-बायोटेक्नोलॉजी पारंपरिक नैनोटेक्नोलॉजी का एक विकल्प है, जो पौधों से मिलने वाले रिसोर्स और बायोडिग्रेडेबल पॉलीमर का इस्तेमाल करती है, जिसका इकोलॉजिकल फुटप्रिंट कम होता है और तकनीकें ज़्यादा सस्टेनेबल होती हैं। नैनो-इनेबल्ड टूल और फॉर्मूलेशन फसल की पैदावार को बेहतर बनाने के लिए नए समाधान देते हैं, साथ ही पर्यावरण

ISSN: 3049-2211

सस्टेनेबिलिटी और सामाजिक-आर्थिक विकास में भी मदद करते हैं। नैनो-बायोटेक्नोलॉजी कीड़ों और पर्यावरण के तनाव के लिए पौधों की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ा सकती है, और बीजों और फाइबर की परफॉर्मेंस को बेहतर बना सकती है । इसके अलावा, नैनो-फॉर्मूलेटेड फर्टिलाइजर और पेस्टिसाइड कंट्रोल्ड, टारगेटेड डिलीवरी के ज़रिए एप्लीकेशन रेट को कम करते हैं, जिससे ज़्यादा केमिकल इस्तेमाल से जुड़े एनवायरनमेंटल असर को कम किया जा सकता है। ग्रीन नैनो-बायोटेक्नोलॉजी के इस्तेमाल में नैनो-एन्हांस्ड फर्टिलाइजर, कंट्रोल्ड-रिलीज़ हर्बिसाइड और रियल-टाइम मॉनिटरिंग के लिए नैनो-सेंसर जैसे ज़रूरी पहलू शामिल हैं। नैनो-फर्टिलाइजर की खास खूबियां, जैसे कंट्रोल्ड रिलीज़ और बढ़ा हुआ सरफेस एरिया, पौधों के न्यूट्रिएंट्स को बेहतर तरीके से सोखने में मदद करते हैं और केमिकल फर्टिलाइजर के मुकाबले कम एनवायरनमेंटल असर के कारण फायदेमंद होते हैं। इसी तरह, नैनो-पेस्टीसाइड की बढ़ी हुई रिएक्टिविटी अक्सर पॉलिनेटर्स को बचाकर या टारगेट ऑर्गेनिज्म को चुनकर पेस्ट कंट्रोल मैकेनिज्म को बेहतर बनाती है। इसके अलावा, नैनो-बायोसेंसर मिट्टी की नमी और न्यूट्रिएंट लेवल को ट्रैक करके प्रिसिजन एग्रीकल्चर में मदद करते हैं, जिससे किसान रिसोर्स का बेहतर इस्तेमाल करने और फसल की प्रोडक्टिविटी बढ़ाने के लिए डेटा-ड्रिवन फैसले ले पाते हैं।

नैनो- उर्वरक:

नैनो-फर्टिलाइज़र, नैनोटेक्नोलॉजी का इस्तेमाल करके बनाए गए पारंपरिक फर्टिलाइज़र के सिंथेसाइज़्ड या मॉडिफाइड रूप हैं। ये बल्क मटीरियल को केमिकल, फिजिकल, मैकेनिकल या बायोलॉजिकल तरीकों से 100 nm से छोटे साइज़ के नैनोपार्टिकल्स में बदलते हैं।

नैनो-उर्वरकों की आवश्यकता:

पारंपरिक उर्वरक पर्यावरण प्रदूषण, कम दक्षता, मृदा क्षरण और पोषक तत्वों के असंतुलन का कारण बनते हैं। भारत में, अभी NPK (नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम) का अनुपात लगभग 10:2.7:1 है, जबकि सुझाया गया अनुपात 4:2:1 है। इस असंतुलन से पैदावार रुक जाती है और 25-30% फसल खराब हो जाती है, जिसका मुख्य कारण नाइट्रोजन (89%) और फास्फोरस (80%) की बड़े पैमाने पर कमी का होना है। नैनो-उर्वरक पौधों को सही मात्रा में पोषक तत्व देकर उर्वरकों की बर्बादी कम करते हैं और 2030 तक 1.4 अरब लोगों के लिए भोजन उपलब्ध कराने वाली दूसरी हरित क्रांति को साकार करने में योगदान दे सकते हैं।

पौधों की वृद्धि पर प्रभाव:

नैनो-फर्टिलाइज़र अपने बड़े सरफेस एरिया, केमिकल रिएक्टिविटी, पानी सोखने की क्षमता और तेज़ी से फैलने की वजह से आम फर्टिलाइज़र से बेहतर काम कर रहे हैं । यह न्यूट्रिएंट्स के निकलने को धीमा कर देता है, जो नाइट्रोजन यूज़ एफिशिएंसी (NUE) पर काफी असर डालता है - जो फसल की पैदावार का एक ज़रूरी इंडिकेटर है। मिट्टी में डालने पर, नैनो-फर्टिलाइज़र सबसे पहले पौधे की जड़ों के संपर्क में आते हैं और ज़रूरी न्यूट्रिएंट्स को सोखकर ग्रोथ को बढ़ावा देते हैं। गेहूं, बाजरा और कपास में, नैनो-फर्टिलाइज़र कार्बोहाइड्रेट के टूटने, पौधों के हार्मोन के निकलने और इंडोल -एसिटिक-एसिड के सिंथेसिस में मदद करते हैं। यह क्लोरोफिल कंटेंट को बढ़ाता है और पौधे की सूरज की रोशनी सोखने की क्षमता, रुबिस्को एक्टिविटी, CO_2 मेटाबॉलिज्म और फोटोसिंथेटिक एफिशिएंसी को बेहतर बनाता है। इसके अलावा, नैनो-फर्टिलाइज़र ने नाइट्रोजन और फॉस्फोरस को सोखने में मदद करता है, रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज़ को डिटॉक्स करने में मदद करता है, और फोटोसिस्टम II और इलेक्ट्रॉन ट्रांसपोर्ट चेन में फोटो-रिडक्शन एक्टिविटी को बढ़ाता है।

बीज अंकुरण पर प्रभाव:

नैनो-फर्टिलाइज़र का बीज के अंकुरण और पौधों की ग्रोथ पर बहुत असर पड़ता है। आसानी से अंदर जाने की वजह से, नैनो-फर्टिलाइज़र पौधों को ज़्यादा न्यूट्रिएंट्स देते हैं, जिससे वे लंबी जड़ों और टहनियों के साथ ज़्यादा स्वस्थ तरीके से बढ़ते हैं।

उच्च पोषक तत्व उपयोग दक्षता:

अपने छोटे पार्टिकल साइज़ की वजह से, नैनो-फर्टिलाइज़र का सरफेस एरिया ज़्यादा होता है, जिससे पौधों के अलग-अलग मेटाबोलिक प्रोसेस के लिए ज़्यादा जगहें आसानी से मिल जाती हैं और इस तरह फोटोसिंथेसिस को बढ़ावा मिलता है। नैनो-फर्टिलाइज़र अपने छोटे पार्टिकल साइज़ और बड़े सरफेस एरिया की वजह से पौधों के सिस्टम में ज़्यादा आसानी से जा सकते हैं, जिससे मिट्टी या पत्तियों के ज़रिए न्यूट्रिएंट्स का लेना और इस्तेमाल बेहतर होता है। इसके अलावा, नैनोपार्टिकल्स में बंद फर्टिलाइज़र न्यूट्रिएंट्स को धीरे-धीरे रिलीज़ करने में मदद करते हैं, जिससे फसलों को लगातार सप्लाई मिलती है, और वोलाटिलाइज़ेशन, डीनाइट्रीफिकेशन , फिक्सेशन और लीचिंग से न्यूट्रिएंट्स के नुकसान को रोकने में मदद मिलती है।

ISSN: 3049-2211

नैनो-कीटनाशक:

नैनो-पेस्टीसाइड्स फसल बचाने के एडवांस्ड फॉर्मूलेशन हैं जो नैनोस्केल मटीरियल का इस्तेमाल करके डिलीवरी, स्टेबिलिटी और असर को बढ़ाते हैं, साथ ही पर्यावरण और इंसानों की सेहत के खतरों को भी कम करते हैं।

नैनो-कीटनाशक की ज़रूरत:

नैनो-पेस्टीसाइड एक्टिव इंग्रीडिएंट डिलीवरी को बेहतर बनाकर, घुलनशीलता बढ़ाकर और समय के साथ कंट्रोल्ड रिलीज़ को आसान बनाकर खेती के ज़्यादा सस्टेनेबल तरीकों में मदद करते हैं। नैनो-पेस्टीसाइड फायदेमंद जीवों पर कम से कम असर के साथ बेहतर पैठ, आसंजन और जगह के हिसाब से असर करते हैं, और पारंपरिक पेस्टीसाइड्स की तुलना में फायदेमंद हैं, जिनमें लीचिंग और वोलाटिलाइजेशन की समस्या होती है। केमिकल पेस्टीसाइड पानी, मिट्टी और हवा को गंदा करते हैं, जिससे बायोएक्यूमुलेशन होता है। नैनो-पेस्टीसाइड कुल केमिकल लोड को कम करके इस चिंता का समाधान करते हैं। उनका कंट्रोल्ड-रिलीज़ मैकेनिज्म कम से कम इकोलॉजिकल फुटप्रिंट के साथ लगातार पेस्टीसाइड डिलीवरी को मुमकिन बनाता है। पारंपरिक पेस्टीसाइड्स की तुलना में नैनो-पेस्टीसाइड का सबसे अच्छा इस्तेमाल यह है कि उन्हें मॉलिक्यूलर मार्कर के साथ फंक्शनलाइज़ किया जा सकता है ताकि पॉलिनेटर्स और प्राकृतिक शिकारियों को नुकसान पहुँचाए बिना खास तौर पर कीटों को टारगेट किया जा सके। अपने सस्टेन्ड-रिलीज़ मैकेनिज्म के साथ नैनो-पेस्टीसाइड्स यह पक्का करते हैं कि कीट लगातार पेस्टीसाइड की सब-लीथल डोज़ के संपर्क में रहें, जिससे रेजिस्टेंस डेवलप होने की संभावना कम हो जाती है और कीट से होने वाले नुकसान और फसल के नुकसान के जोखिम को कम करने में मदद मिलती है, लेकिन नैनो-पेस्टीसाइड्स चुनते समय इन बातों का ध्यान रखना चाहिए-

- ✓ तैयार करने में आसान,
- ✓ आर्थिक रूप से व्यवहार्य,
- ✓ कई तरह के कीटों पर असरदार,
- ✓ गैर-विषाक्त,
- ✓ फ़ूड चेन में जमा नहीं होना चाहिए।

कार्रवाई की प्रणाली:

1. बेहतर टारगेटिंग और पेनेट्रेशन:

नैनो-पेस्टीसाइड, क्यूटिकल और पौधे की सेल वॉल में ज़्यादा आसानी से घुस सकते हैं। उदाहरण के लिए, मेसोपोरस और पॉलीमेरिक सिलिका नैनोपार्टिकल्स हाइड्रोफोबिक पेस्टीसाइड्स की स्टेबिलिटी और सॉल्युबिलिटी को बेहतर बनाते हैं, जिससे पौधों की जड़ों और पत्तियों के ज़रिए उनका एब्जॉर्प्शन बढ़ जाता है। इससे पौधों के अंदर सिस्टमिक मूवमेंट आसान हो जाता है, जिससे छिपे हुए कीड़ों और बीमारियों के खिलाफ उनका असर बढ़ जाता है। सिलिका-बेस्ड फॉर्मूलेशन जैसे नैनोकैरियर सिस्टम, पेस्टीसाइड्स के पत्तियों से एब्जॉर्प्शन को बढ़ाने में मदद करते हैं, जिससे पौधों के टिशू में बेहतर ट्रांसलोकेशन और लंबे समय तक रिटेंशन को बढ़ावा मिलता है। यह पौधों का रस चूसने वाले छेदने वाले कीड़ों के असरदार मैनेजमेंट के लिए बहुत ज़रूरी है।

2. लगातार एक्टिविटी का कंट्रोल्ड रिलीज़:

समय के साथ पेस्टिसाइड्स को कंट्रोल में और लगातार छोड़ने से, बार-बार इस्तेमाल करने की ज़रूरत के बिना, कीड़ों से लगातार सुरक्षा मिलती है, और पर्यावरण में गंदगी और ग्राउंडवॉटर में पानी का रिसाव भी कम होता है।

3. बहुक्रियाशील नैनो-कीटनाशक:

कुछ नैनो-पेस्टीसाइड दोहरे या कई कामों के लिए बनाए जाते हैं। उदाहरण के लिए, कुछ नैनो-पेस्टीसाइड एक ही समय में फंगीसाइड और इंसेक्टिसाइड दोनों को एक साथ इस्तेमाल करने के लिए डिज़ाइन किए जाते हैं, जिससे एक ही बार में कई कीड़ों को टारगेट किया जा सकता है। इसके अलावा, कुछ UV प्रोटेक्शन फीचर्स के साथ डिज़ाइन किए जाते हैं, जिससे धूप में एक्टिव इंग्रीडिएंट को खराब होने से रोकने और खेत में लंबे समय तक असर बनाए रखने में मदद मिलती है।

नैनो-बायोसेंसर:

नैनो-बायोसेंसर के खेती में कई तरह के इस्तेमाल होते हैं, जिससे फर्टिलाइज़र, हर्बिसाइड, पेस्टीसाइड, मिट्टी की नमी और pH लेवल का पता लगाना और मॉनिटर करना मुमकिन होता है। जब इन्हें प्रिसिजन फार्मिंग सिस्टम के साथ इंटीग्रेट किया जाता है, तो ये स्मार्ट सेंसिंग डिवाइस न्यूट्रिएंट मैनेजमेंट को बेहतर बनाते हैं, इनपुट का इस्तेमाल बेहतर करते हैं, प्रोडक्शन कॉस्ट कम करते हैं और एनवायरनमेंट पर असर कम करते हैं। नैनो -सेंसर पौधों के वायरस, मिट्टी के न्यूट्रिएंट स्टेटस और फसल के पैथोजन्स की भी पहचान कर सकते हैं, जिससे समय पर, टारगेटेड इंटरवेंशन में मदद मिलती है।

नैनो-सेंसर टेक्नोलॉजी पर आधारित सटीक खेती की स्ट्रेटेजी पानी, पोषक तत्वों और एग्रोकेमिकल्स जैसे ज़रूरी संसाधनों का बेहतर इस्तेमाल बढ़ाती हैं। इसके अलावा, नैनो-सेंसर बैक्टीरिया और वायरस से होने वाली गंदगी का तेज़ी से और सही पता लगाने में मदद करते हैं, जिससे खाने की सुरक्षा और क्वालिटी बेहतर होती है।

ISSN: 3049-2211

इलेक्ट्रोकेमिकली फंक्शनलाइज्ड सिंगल-वॉल कार्बन नैनोट्यूब (SWCNT)-बेस्ड नैनो-सेंसर, जो अक्सर मेटल या मेटल ऑक्साइड नैनोपार्टिकल्स के साथ होते हैं, अमोनिया, नाइट्रोजन ऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड, सल्फर डाइऑक्साइड और वोलाटाइल ऑर्गेनिक कंपाउंड जैसी खेती की गैसों का पता लगाने में खास तौर पर असरदार होते हैं। ये सिस्टम एनवायरनमेंटल पॉल्यूटेंट्स की मॉनिटरिंग करने, जीवों पर उनके असर का पता लगाने और फसल की पैदावार में सुधार में मदद करने के लिए बहुत काम के हैं।

नए एप्लीकेशन ने यह भी दिखाया है कि पालक जैसे पौधे, आस-पास की चीज़ों के जवाब में इंफ्रारेड सिग्नल भेजने में सक्षम लिविंग सेंसिंग प्लेटफॉर्म में बदल जाते हैं, जिससे वे बायोलॉजिकल ऑटो-सैंपलर के तौर पर काम करते हैं जो अपने आस-पास की चीज़ों के बारे में रियल-टाइम जानकारी देते हैं।

चुनौतियाँ और सुरक्षा संबंधी बातें

इसके अच्छे पोटेंशियल के बावजूद, नैनो-बायोटेक्नोलॉजी को सावधानी से अपनाना होगा। मुख्य चुनौतियों में शामिल हैं:

- ✓ नैनो-फॉर्मूलेशन का मानकीकरण,
- ✓ दीर्घकालिक पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन,
- ✓ नैनो-आधारित कृषि इनपुट के लिए नियामक ढांचे,
- ✓ लागत प्रभावी बड़े पैमाने पर उत्पादन,
- ✓ किसान जागरूकता और क्षेत्र-स्तरीय सत्यापन,
- ✓ सुरक्षित इस्तेमाल पक्का करने के लिए नैनोपार्टिकल की टॉक्सिसिटी, बने रहने और मिट्टी के माइक्रोबायोटा के साथ इंटरैक्शन का साइंटिफिक मूल्यांकन ज़रूरी है।

ज़िम्मेदार इनोवेशन, ट्रांसपेरेंट रेगुलेटरी पॉलिसी, और इंटरडिसिप्लिनरी सहयोग, मेनस्ट्रीम अपनाने के लिए ज़रूरी हैं।

भविष्य की संभावनाओं

खेती का भविष्य बायोलॉजिकल समझ को टेक्नोलॉजी के नए तरीकों के साथ जोड़ने में है। नैनो-बायोटेक्नोलॉजी, मटीरियल साइंस, प्लांट फिजियोलॉजी, माइक्रोबायोलॉजी और एनवायर्नमेंटल इंजीनियरिंग का मेल है। न्यूट्रिएंट मैनेजमेंट, स्ट्रेस कम करने, फसल की सुरक्षा और कटाई के बाद की टेक्नोलॉजी में इसके इस्तेमाल से दुनिया भर में फ़ूड सिक्योरिटी की चुनौतियों से निपटने की बहुत ज़्यादा क्षमता दिखती है। रिसर्च की कोशिशें बायोडिग्रेडेबल नैनोमटेरियल, कार्बन-बेस्ड नैनोस्ट्रक्चर, नैनो-इनेबल्ड जीन डिलीवरी सिस्टम और नैनो-बायो इंटरफेस पर ज़्यादा फोकस कर रही हैं, जो पौधे- माइक्रोब इंटरैक्शन को बेहतर बनाते हैं। जैसे-जैसे साइंटिफिक समझ बढ़ेगी, नैनो - बायोटेक्नोलॉजी अलग-अलग एग्रो-क्लाइमेट कंडीशन के हिसाब से मज़बूत क्रॉपिंग सिस्टम डेवलप करने में अहम भूमिका निभा सकती है।

निष्कर्ष

नैनो-बायोटेक्नोलॉजी सिर्फ़ एक टेक्नोलॉजिकल तरक्की नहीं है; यह ज़्यादा इनोवेटिव, सुरक्षित और ज़्यादा सस्टेनेबल खेती के सिस्टम की ओर एक बड़ा बदलाव है। इनपुट एफिशिएंसी में सुधार करके, एनवायरनमेंटल फुटप्रिंट को कम करके और फसल की मज़बूती को बढ़ाकर, यह मॉडर्न खेती के सामने आने वाली कुछ सबसे बड़ी चुनौतियों का प्रैक्टिकल समाधान देती है।

सस्टेनेबल खेती के विकास के लिए, इको-फ्रेंडली नैनोटेक्नोलॉजी को पारंपरिक खेती के तरीकों, किसानों की शिक्षा और सपोर्टिव पॉलिसी फ्रेमवर्क के साथ जोड़ना ज़रूरी होगा। ज़िम्मेदार इनोवेशन और साइंटिफिक सख्ती के साथ, नैनो-बायोटेक्नोलॉजी एक साफ़, सेहतमंद और ज़्यादा प्रोडक्टिव खेती का भविष्य बनाने में एक नया रास्ता बन सकती है।

****

कुसुम वृक्ष: जनजातीय जीवन का आधार

राजन चौधरी- विषय वस्तु विशेषज्ञ
दीपक राय- वरिष्ठ वैज्ञानिक सह अध्यक्ष
निखिल राज एम. एवं ओम प्रकाश कांटवा- विषय वस्तु विशेषज्ञ
कृषि विज्ञान केन्द्र, खूंटी,
भाकृअनुप-रा.कृ.उ.प्र.संस्थान, नामकुम राँची, झारखण्ड

भारत की समृद्ध प्राकृतिक धरोहर में अनेक वृक्ष ऐसे हैं जो केवल पर्यावरणीय संतुलन बनाए रखने के लिए ही महत्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि ग्रामीण, जनजातीय एवं कृषक जीवन की रीढ़ भी माने जाते हैं। इनमें से एक है कुसुम वृक्ष (*Schleichera oleosa*)। कुसुम को सदियों से आजीविका, औषधि, भोजन और संस्कृति का प्रतीक माना गया है। विशेष रूप से झारखण्ड, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, ओडिशा और बिहार जैसे राज्यों के जनजातीय व कृषक समुदायों के लिए यह वृक्ष जीवन का आधार है।

कुसुम वृक्ष केवल हरियाली का दूत नहीं, बल्कि लाख उत्पादन, कुसुम तेल, औषधीय महत्व और सामाजिक परंपराओं का अभिन्न हिस्सा है। यही कारण है कि इसे "जनजातीय एवं कृषक जीवन का आधार" कहना बिल्कुल उचित है।

कुसुम वृक्ष का स्वरूप एवं वितरण:

कुसुम वृक्ष एक मध्यम से बड़े आकार का पर्णपाती वृक्ष है जो प्रायः 15 से 20 मीटर तक ऊँचा होता है। इसका तना सीधा और मोटा होता है तथा छाल खुरदरी और धूसर-भूरी दिखाई देती है। इसकी पत्तियाँ संयुक्त, मोटी और चमकदार होती हैं, जिनमें सामान्यतः 3-4 जोड़ी पर्णिकाएँ होती हैं। वसंत ऋतु में छोटे-छोटे हरिताभ-पीले फूल गुच्छों में खिलते हैं। इसके फल गोलाकार, लालिमा लिए हुए और तीन खंडों में विभाजित होते हैं जिनमें कठोर बीज पाए जाते हैं। बीज तेलयुक्त होते हैं जिनसे 30-40 % तक तेल निकाला जा सकता है।

भारत में यह झारखण्ड के खूंटी जिले सहित, छत्तीसगढ़, बिहार, मध्यप्रदेश, ओडिशा, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश के वनों में विशेष रूप से पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यह नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका, म्यांमार और थाईलैंड जैसे देशों में भी प्राकृतिक रूप से उगता है। कुसुम वृक्ष शुष्क, पथरीली तथा कम उर्वर भूमि पर भी आसानी से उग सकता है और लंबे समय तक जीवित रहता है। यही कारण है कि इसे ग्रामीण एवं जनजातीय जीवन का आधार कहा जाता है।

पर्यावरणीय महत्व:

कुसुम वृक्ष न केवल मानव जीवन के लिए उपयोगी है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है। इसकी जड़ें गहरी होती हैं, जो मृदा को बांधकर कटाव और अपक्षय को रोकती हैं। यह वृक्ष शुष्क और कम उपजाऊ भूमि पर भी पनप सकता है, जिससे भूमि का स्थायित्व और जैविक संतुलन बना रहता है।

कुसुम वृक्ष वातावरण से कार्बन डाइऑक्साइड अवशोषित करता है और ऑक्सीजन प्रदान करता है, जिससे वायु शुद्धि होती है और

ISSN: 3049-2211

जलवायु संतुलन में मदद मिलती है। इसके फूल और फल अनेक पक्षियों, मधुमक्खियों और अन्य कीटों के लिए भोजन का स्रोत हैं, जो जैव विविधता बनाए रखने में सहायक हैं।

वृक्ष की घनी छाया गर्मियों में पशु और मनुष्य दोनों को राहत देती है। इसके अतिरिक्त, कुसुम वृक्ष सूखा और उच्च तापमान सहन कर सकता है, इसलिए यह जलवायु परिवर्तन के प्रभावों से निपटने में सहायक साबित होता है। जनजातीय और ग्रामीण क्षेत्रों में यह वृक्ष पारिस्थितिकी तंत्र का अभिन्न हिस्सा है और जैविक विविधता के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इस प्रकार, कुसुम वृक्ष पर्यावरणीय दृष्टि से न केवल स्थायित्व और संतुलन बनाए रखता है, बल्कि प्राकृतिक संसाधनों की सुरक्षा और जैव विविधता के संरक्षण में भी अमूल्य योगदान देता है।

सामाजिक और सांस्कृतिक भूमिका:

कुसुम वृक्ष सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से जनजातीय और ग्रामीण जीवन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। सांस्कृतिक दृष्टि से, कुसुम की पत्तियाँ, फूल और फल धार्मिक अनुष्ठानों में प्रयुक्त होते हैं। विवाह, जन्म, पर्व और अन्य सामाजिक समारोहों में लाख से बनी चूड़ियाँ, सजावटी सामान और फूल का उपयोग शुभता के प्रतीक के रूप में किया जाता है। यह समुदायों में सामूहिक सहयोग और श्रम का प्रतीक भी है, क्योंकि लाख संग्रहण और प्रसंस्करण में पूरा गांव या जनजातीय समूह सम्मिलित रहता है।

जनजातीय जीवन में कुसुम का महत्व

कुसुम वृक्ष जनजातीय जीवन का अभिन्न हिस्सा है। यह वृक्ष केवल प्राकृतिक संसाधन ही नहीं बल्कि उनकी आजीविका, परंपरा और सांस्कृतिक पहचान से भी जुड़ा हुआ है। जनजातीय समुदाय कुसुम को बहुउपयोगी वृक्ष मानते हैं, क्योंकि इसका प्रत्येक हिस्सा उनके जीवन में किसी न किसी रूप में सहायक होता है।

आजीविका का साधन:

- ***लाख उत्पादन:*** कुसुम वृक्ष पर पाले गए लाख कीट (*Kerria lacca*) उच्च गुणवत्ता की लाख उत्पन्न करते हैं। लाख से बनी चूड़ियाँ, खिलौने, सजावटी सामान जनजातीय समुदायों की आय का प्रमुख स्रोत हैं।
- ***बीज संग्रहण:*** कुसुम के बीजों को एकत्र कर तेल निकाला जाता है, जो ग्रामीण बाजारों में बेचा जाता है।

खाद्य एवं पोषण:

- *कुसुम* का पका हुआ फल मीठा व पोषणयुक्त होता है जिसे जनजातीय समुदाय फल के रूप में खाते हैं।
- बीजों से निकला तेल कभी-कभी भोजन पकाने में भी प्रयोग होता है।

औषधीय उपयोग:

जनजातीय वैद्य कुसुम वृक्ष की छाल और बीजों का प्रयोग विभिन्न बीमारियों में करते हैं-

- छाल का काढ़ा दस्त और पेट दर्द में।
- बीजों का तेल त्वचा रोग और गठिया में।
- फूल व फल रक्तशुद्धि और शीतलन के लिए।

ISSN: 3049-2211

हिस्सा/भाग	औषधीय गुण	उपयोग / उपचार
पत्तियाँ	एंटीइंफ्लेमेटरी, एंटीबैक्टीरियल	ज्वर, बुखार और त्वचा की सूजन में प्रयोग
फूल/कलियाँ	हल्के एंटीऑक्सिडेंट, औषधीय गुण	पारंपरिक जड़ी-बूटी मिश्रण में प्रयोग
बीज	एंटीसेप्टिक, एंटीइंफ्लेमेटरी, तेल में पोषण तत्व	घाव भरने, त्वचा रोग, सूजन और दर्द कम करने में इस्तेमाल
बीज का तेल	मॉइस्चराइजिंग, एंटीफंगल, त्वचा सुधारक	मसाज, त्वचा कोमल बनाने, जलन और फंगल संक्रमण में उपयोग
बीज का पेस्ट	जीवाणुरोधी, त्वचा उपचार	फोड़े-फुंसी, जलन और कीट काटने में पारंपरिक रूप से लगाया जाता है
छाल	टैनिन्स, एंटीइंफ्लेमेटरी	दांत और मसूड़ों के दर्द में, कुछ लोक उपचार में छाल का उपयोग
लकड़ी का चूर्ण	एंटीसेप्टिक	छोटे घाव और जलन पर लेप के रूप में उपयोग

सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व:

- कई जनजातियों में विवाह और पर्वों पर कुसुम की डालियों का प्रयोग किया जाता है।
- लाख से बनी चूड़ियाँ विवाह संस्कार का अनिवार्य हिस्सा होती हैं।

कृषक जीवन में कुसुम का महत्व

कुसुम वृक्ष कृषक जीवन के लिए बहुआयामी महत्व रखता है। किसान इसे न केवल प्राकृतिक संपदा के रूप में बल्कि आय एवं सुरक्षा के साधन के रूप में देखते हैं।

1. कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में योगदान:

कुसुम वृक्ष कृषकों को अतिरिक्त आय का अवसर प्रदान करता है।

- किसान अपने खेतों के मेड़ या चारों ओर कुसुम वृक्ष लगाते हैं।
- लाख की खेती से किसानों को नकद आय होती है।
- बीज से तेल निकालकर पशुओं व कृषि कार्यों में भी प्रयोग होता है।

2. कृषि उपकरण और लकड़ी:

कुसुम की लकड़ी मजबूत होती है। इससे हल, बैलगाड़ी के पहिए, दरवाजे, चौखटें और अन्य कृषि उपकरण बनाए जाते हैं।

3. पशुपालन में योगदान:

कुसुम वृक्ष की पत्तियाँ पशुओं के चारे के रूप में प्रयुक्त होती हैं। इससे दुग्ध उत्पादन बढ़ाने में मदद मिलती है।

आर्थिक दृष्टि से कुसुम वृक्ष:

कुसुम पर पाले जाने वाले लाख कीट से उच्च गुणवत्ता की लाख प्राप्त होती है, जिसकी मांग घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजार में रहती है। लाख से बने शिल्प, सजावटी वस्तुएँ, वार्निश, आभूषण और औद्योगिक उत्पाद किसानों एवं आदिवासियों को अतिरिक्त आय प्रदान करते हैं।

लाख उद्योग का आधार:

- भारत में लाख उत्पादन का लगभग 60-70% हिस्सा कुसुम वृक्ष पर आधारित है।
- झारखण्ड और छत्तीसगढ़ के लाखों लोग इससे अपनी जीविका चलाते हैं।
- लाख का निर्यात भी किया जाता है जिससे विदेशी मुद्रा अर्जित होती है।

कुसुम तेल:

- बीजों से 30-40% तक तेल प्राप्त होता है।
- यह तेल खाद्य, औद्योगिक और औषधीय उपयोगों में काम आता है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में यह सस्ता ईंधन भी है।

हस्तशिल्प उद्योग:

- लाख से बने हस्तशिल्प देश-विदेश में प्रसिद्ध हैं।
- महिला स्व-सहायता समूह इससे स्वरोजगार प्राप्त करते हैं।

संरक्षण और संवर्द्धन के उपाय:

कुसुम वृक्ष (*Schleichera oleosa*) जनजातीय और कृषक जीवन के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसके आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक मूल्य को देखते हुए इसके संरक्षण और संवर्द्धन की आवश्यकता अत्यंत जरूरी है। आज यह वृक्ष कई प्राकृतिक और मानवजनित कारणों से खतरे में है, जैसे वनों की कटाई, जलवायु परिवर्तन, अनियमित वर्षा और पारंपरिक तकनीकों का सीमित उपयोग। इसलिए इसके संरक्षण के लिए ठोस कदम उठाना आवश्यक है।

ISSN: 3049-2211

संरक्षण के उपाय:

1. ***सामुदायिक वृक्षारोपण:*** ग्रामीण क्षेत्रों और जनजातीय बस्तियों में कुसुम वृक्ष के बड़े पैमाने पर रोपण कार्यक्रम आयोजित किए जाएँ। इससे जैव विविधता बढ़ेगी और मृदा अपरदन कम होगा।
2. ***वन प्रबंधन:*** कुसुम वनों की निगरानी और संरक्षण हेतु स्थानीय समुदायों को शामिल किया जाए। कटाई पर नियंत्रण और प्राकृतिक संसाधनों का सतत उपयोग सुनिश्चित करना चाहिए।
3. ***वैज्ञानिक तकनीक का उपयोग:*** लाख कीट पालन, तेल निष्कर्षण और पौधों की वृद्धि के लिए वैज्ञानिक प्रशिक्षण और आधुनिक तकनीकों को अपनाना। इससे उत्पादन में वृद्धि और वृक्ष की स्वास्थ्य सुरक्षा सुनिश्चित होगी।
4. ***प्रसंस्करण इकाईयाँ:*** ग्राम स्तर पर लाख प्रसंस्करण, तेल निकालने और हस्तशिल्प निर्माण की इकाईयों को स्थापित करना।
5. ***जागरूकता अभियान:*** युवा पीढ़ी में कुसुम वृक्ष के महत्व के प्रति जागरूकता पैदा करना। इसके पर्यावरणीय, आर्थिक और सामाजिक लाभों के बारे में शिक्षा देना।

संवर्द्धन के उपाय:

- पौधों की नियमित देखभाल, सिंचाई और पोषण।
- सूखा प्रतिरोधी और रोग प्रतिरोधी किस्मों का विकास।
- वनों और कृषि भूमि में कुसुम के मिश्रित रोपण से स्थायित्व बनाए रखना।

इस प्रकार, कुसुम वृक्ष का संरक्षण और संवर्द्धन न केवल जनजातीय और कृषक जीवन को सुरक्षित करता है, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और सांस्कृतिक धरोहर को भी बनाए रखने में सहायक है।

वर्तमान समय में जब जलवायु परिवर्तन और आजीविका संकट ग्रामीण जीवन को प्रभावित कर रहे हैं, तब कुसुम वृक्ष का महत्व और भी बढ़ जाता है। यदि इसके संरक्षण और संवर्द्धन की दिशा में ठोस कदम उठाए जाएँ तो यह वृक्ष आने वाली पीढ़ियों के लिए भी समृद्धि और स्थायित्व का आधार बनेगा।

मखाना खेती: बिहार की पहचान

आशीष राय, सुनील कुमार मंडल, धीरेन्द्र कुमार, संजय कुमार

क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, झंझारपुर, मधुबनी, बिहार

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

मखाना (*Euryale ferox* Salisb.) एक महत्वपूर्ण जलीय फसल है, जो मुख्यतः भारत के बिहार राज्य में उगाई जाती है। यह फसल पोषण एवं औषधीय गुणों से भरपूर होने के साथ-साथ ग्रामीण अर्थव्यवस्था और किसानों की आय वृद्धि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भारत के कुल मखाना उत्पादन का लगभग 85–90 प्रतिशत योगदान बिहार राज्य का है। हाल के वर्षों में बिहार सरकार एवं भारत सरकार द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं, अनुसंधान संस्थानों के सहयोग तथा बाजार मांग में वृद्धि के कारण मखाना खेती को नई पहचान मिली है।

भूमिका

भारतीय कृषि प्रणाली विविध फसलों पर आधारित है, जिनमें कुछ फसलें क्षेत्र विशेष की पहचान बन जाती हैं। मखाना ऐसी ही एक विशिष्ट फसल है, जो बिहार की पहचान के रूप में स्थापित हो चुकी है। पारंपरिक रूप से यह फसल मिथिला एवं कोसी क्षेत्र की आर्द्रभूमियों में उगाई जाती रही है। वर्तमान समय में पोषण सुरक्षा, आय संवर्धन एवं निर्यात क्षमता के कारण मखाना को एक उच्च मूल्य वाली नकदी फसल के रूप में देखा जा रहा है।

मखाना का वर्गीकरण एवं वनस्पति विवरण

मखाना का वानस्पतिक नाम *Euryale ferox* Salisb. है, जो Nymphaeaceae कुल से संबंधित है। यह एक वार्षिक जलीय पौधा है, जिसकी पत्तियां बड़ी, गोलाकार एवं कांटेदार होती हैं। इसका बीज ही आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भाग है, जिसे प्रसंस्करण के बाद मखाना के रूप में उपयोग किया जाता है।

बिहार में मखाना उत्पादन की स्थिति (आंकड़ों का विश्लेषण)

उपलब्ध कृषि एवं बागवानी विभाग के आंकड़ों के अनुसार—

- ✓ बिहार में मखाना की खेती लगभग 13,000–15,000 हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है।
- ✓ राज्य का औसत उत्पादन 18–20 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।
- ✓ देश के कुल मखाना उत्पादन का 85–90 प्रतिशत बिहार से प्राप्त होता है।
- ✓ मधुबनी, दरभंगा, सहरसा, सुपौल, कटिहार, पूर्णिया, अररिया एवं किशनगंज प्रमुख उत्पादक जिले हैं।

ISSN: 3049-2211

ये आंकड़े मखाना को बिहार की अर्थव्यवस्था की एक रणनीतिक फसल सिद्ध करते हैं।

कृषि तकनीक एवं उत्पादन प्रणाली

मखाना एक स्थिर जल वाली फसल है, जिसके लिए 1–1.5 मीटर जल गहराई उपयुक्त मानी जाती है। बीज प्रसारण, पौध प्रबंधन, फूल एवं फल विकास तथा कटाई के लिए विशेष तकनीकी ज्ञान एवं श्रम की आवश्यकता होती है। पारंपरिक पद्धतियों के साथ-साथ अब वैज्ञानिक तकनीकों, जैसे—उन्नत बीज चयन, जल प्रबंधन एवं यंत्रीकृत प्रसंस्करण पर बल दिया जा रहा है।

पोषण एवं औषधीय महत्व

मखाना में 9–10% प्रोटीन, 75–80% कार्बोहाइड्रेट तथा कैल्शियम, फॉस्फोरस, आयरन एवं मैग्नीशियम पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। आयुर्वेदिक साहित्य के अनुसार मखाना बलवर्धक, रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाला एवं मधुमेह नियंत्रण में सहायक है।

आर्थिक महत्व एवं किसानों की आय

वर्तमान बाजार परिदृश्य में प्रसंस्कृत मखाना का मूल्य 600–1200 रुपये प्रति किलोग्राम तक पाया जाता है। वैज्ञानिक पद्धति से खेती करने पर किसान प्रति हेक्टेयर 4–6 लाख रुपये तक की आय अर्जित कर सकते हैं। इस प्रकार मखाना खेती किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में सहायक सिद्ध हो रही है।

मखाना से संबंधित प्रमुख सरकारी योजनाएं

क. मखाना विकास योजना (बिहार सरकार)

इस योजना के अंतर्गत गुणवत्तायुक्त बीज, तालाब सुधार, प्रशिक्षण एवं प्रसंस्करण यंत्रों पर अनुदान प्रदान किया जाता है।

ख. राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन (NFSM)

NFSM के अंतर्गत प्रदर्शन इकाइयों, तकनीकी मार्गदर्शन एवं क्षमता विकास पर बल दिया गया है।

ग. प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना

इस योजना के माध्यम से मखाना किसानों को प्रतिवर्ष 6000 रुपये की प्रत्यक्ष आय सहायता प्राप्त होती है।

घ. कृषि यंत्रीकरण योजना

मखाना प्रसंस्करण मशीनों पर 40–60% तक अनुदान उपलब्ध कराया जा रहा है।

अनुसंधान एवं विकास

दरभंगा स्थित मखाना अनुसंधान केंद्र एवं विभिन्न कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा उन्नत किस्मों, रोग प्रबंधन एवं प्रसंस्करण तकनीकों पर शोध किया जा रहा है, जिससे उत्पादन एवं गुणवत्ता में सुधार हो रहा है।

चुनौतियां एवं संभावनाएं

मुख्य चुनौतियों में अधिक श्रम लागत, जोखिमपूर्ण कटाई प्रक्रिया एवं संगठित विपणन का अभाव शामिल है। वहीं, एफपीओ गठन, निर्यात प्रोत्साहन, मूल्य संवर्धन एवं ब्रांडिंग से इस क्षेत्र में व्यापक संभावनाएं हैं।

निष्कर्ष

मखाना खेती बिहार की कृषि, संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था का अभिन्न अंग है। सरकारी योजनाओं, अनुसंधान सहयोग एवं वैज्ञानिक तकनीकों के समावेश से मखाना खेती को राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान दिलाई जा सकती है। यह फसल सतत कृषि एवं ग्रामीण विकास का एक सशक्त माध्यम बन सकती है।

गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती की आवश्यकता और महत्व

शिवानी त्रिपाठी- पादप रोग विज्ञान विभाग
अनुपम चौबे एवं अनिल पटेल- कीट विज्ञान विभाग
आचार्य नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रोद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उत्तर प्रदेश)

परिचय

भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही कृषि कार्यों में गौ-उत्पादों जैसे गोबर और गौमूत्र का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। ऋग्वेद में गाय को "विश्व की माता" कहा गया है, जो संपूर्ण सृष्टि का पोषण करती है। विष्णु पुराण के अनुसार भी गाय सभी प्राणियों के लिए सर्वोत्तम आश्रय मानी गई है। समय के साथ भारत की कृषि पद्धतियों में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। निरंतर बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के दबाव में उत्पादन बढ़ाने हेतु रासायनिक उर्वरकों, विषैले कीटनाशकों तथा अत्यधिक भूजल दोहन का अंधाधुंध प्रयोग किया गया, जिसके परिणामस्वरूप भूमि की उर्वरता, कृषि उत्पादकता, भूजल स्तर और मानव स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। खेती की बढ़ती लागत और बाजार पर बढ़ती निर्भरता के कारण अनेक किसान कृषि छोड़ने को विवश हो रहे हैं, वर्मी कम्पोस्ट, कम्पोस्ट एवं बायोडायनामिक खाद जैसी वैकल्पिक प्रणालियाँ भी निर्माण की जटिलता के कारण किसानों को अंततः बाजार-आश्रित बना देती हैं। वर्तमान परिस्थितियों में ऐसी कृषि प्रणाली की आवश्यकता है जिसमें लागत न्यूनतम हो, उत्पादन अधिक हो, खाद्यान्न की गुणवत्ता उत्तम बनी रहे, मानव स्वास्थ्य सुरक्षित रहे तथा पर्यावरण का संरक्षण हो सके। गौ-आधारित प्राकृतिक खेती इसी विचार पर आधारित है, जिसमें कृषक को बाजार से बाहरी इनपुट खरीदने की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि अपने पास उपलब्ध संसाधनों और देशी गाय पर आधारित कृषि को अपनाने पर बल दिया जाता है। इसी कारण इस पद्धति को शून्य लागत प्राकृतिक खेती भी कहा जाता है।

प्राकृतिक खेती के उद्देश्य

1. रसायन-मुक्त खेती को प्रोत्साहित करना।
2. गौवंश आधारित जैविक इनपुट्स का महत्व समझाना।
3. कृषि लागत में कमी लाना।
4. मृदा-स्वास्थ्य एवं पर्यावरण संरक्षण।
5. स्वस्थ, सुरक्षित एवं पोषक खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देना।
6. किसानों को आत्मनिर्भर एवं सशक्त बनाना।
7. प्राकृतिक खेती को मुख्यधारा में लाना।

प्राकृतिक खेती के लाभ

- इस तकनीक के इस्तेमाल से किसानों को किसी भी प्रकार के रसायन और कीटनाशक तथा बीजों को खरीदने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। इस प्रकार की खेती में किसान रासायनिक खादों और कीटनाशकों के स्थान पर अपने घर पर बनाई गई सामग्रियों का प्रयोग करते हैं।

ISSN: 3049-2211

- खेती करने के दौरान लागत कम आती है। प्राकृतिक खेती से मृदा में उपस्थित जैव विविधता का विकास होता है। मृदा की उर्वराशक्ति बढ़ती है तथा पफसलों की पैदावार अच्छी होती है।
- उपज की अच्छी गुणवत्ता होने के कारण बाजार में दाम भी अच्छे मिलेंगे।
- जलवायु परिवर्तन के कारण फसलों को होने वाले नुकसान के प्रभावों को भी यह कम करती है।
- पौधों को पानी की कम जरूरत होती है तथा भूमि की उर्वराशक्ति के साथ-साथ मृदा की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक गुणवत्ता भी बढ़ जाती है।
- वातावरण के सभी कारकों एवं जीवों के साथ तालमेल बनाकर पारिस्थितिक तंत्र को व्यवस्थित रखता है।

गौ-उत्पाद आधारित प्रमुख प्राकृतिक इनपुट

गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती में देशी गाय से प्राप्त गोबर, गौमूत्र, दूध, दही और घी का उपयोग कर विभिन्न जैविक इनपुट तैयार किए जाते हैं। ये इनपुट मृदा की जैविक सक्रियता को बढ़ाकर फसलों की वृद्धि, पोषण एवं रोग-कीट प्रबंधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

बीजामृत

बीजामृत गाय के ताजे गोबर, गौमूत्र, चूना और अन्य प्राकृतिक घटकों से तैयार किया जाने वाला एक प्रभावी बीज उपचार घोल है। इसे बीजों के लिए अमृत समान माना जाता है, क्योंकि इसके उपयोग से बीजों का अंकुरण तेज, समान और स्वस्थ होता है।

बीजामृत बीजों को फफूंदजनित रोगों से बचाता है, जिससे बीज सुरक्षित रहते हैं और अधिक संख्या में अंकुरित होते हैं। इसके प्रभाव से पौधों की जड़ों की वृद्धि तेज होती है तथा मिट्टी की उर्वरता का लाभ फसलों को अधिक मिलता है।

बीजामृत बनाने की विधि: सबसे पहले 50 लीटर क्षमता वाले प्लास्टिक ड्रम में 20 लीटर पानी लें। इसके बाद इसमें 5 कि.ग्रा. गाय का गोबर घोलें। फिर इस घोल में 5 लीटर गौमूत्र, आधा लीटर गाय का दूध, 50 ग्राम चूना और 50 ग्राम बरगद के पेड़ की जड़ की मिट्टी अच्छी तरह मिलाएँ। ड्रम को 48 घंटे के लिए किसी छायादार स्थान पर कपड़े से ढककर रखें। बीच-बीच में लकड़ी से हिलाते रहें। 24 घंटे में घोल उपयोग के लिए तैयार हो जाता है।

प्रयोग करने की विधिर: बीजामृत का उपयोग अधिकांश फसलों में जैसे धान, गेहूँ, मक्का, ज्वार, बाजरा, दलहनी एवं तिलहनी फसलों के बीज उपचार के लिए किया जा सकता है। बीज बोवाई से 24 घंटे पहले बीजामृत को बीजों के ऊपर छिड़क कर हल्के हाथ से मिलाएँ। इसके पश्चात बीजों को छाँव में सुखाकर बुवाई करें।

जीवामृत

जीवामृत एक अत्यधिक प्रभावशाली खाद है जिसे गाय के गोबर व गौमूत्र के साथ पानी में कई अन्य पदार्थ मिलाकर बनाया जाता है। यह भूमि में सूक्ष्मजीवों की संख्या एवं क्रियाशीलता को बढ़ाता है जिससे फसल स्वस्थ रहती है और पैदावार में वृद्धि मिलती है। जीवामृत खाद दो प्रकार से तैयार कर सकते हैं-

(अ) घन जीवामृत: यह एक जीवाणुरहित सूखी खाद है जिसे बुवाई के समय या खड़ी फसल के सिंचाई के तीन दिन बाद भी दे सकते हैं।

बनाने की विधि: किसी छायादार स्थान पर लगभग 100 किग्रा. ताजा गोबर को फर्श पर या पॉलीथीन पर फैलाएँ। इसमें 1 किलोग्राम गुड़ या फल का गुड़ा घोलकर डालें। इसके बाद 2 किग्रा. बेसन 50 से 100 ग्राम बरगद के पेड़ की मिट्टी डालें। 1 लीटर गौमूत्र डालकर सब सामग्री को फावड़े से अच्छी तरह मिलाएँ। इस मिश्रण को ढेर लगाकर जूट की बोरी से ढक दें। 48 घंटे बाद जूट की बोरी हटा दें और घन जीवामृत तैयार हो जाएगा। इसके बाद इसे सुखाकर पूर्ण रूप से सूखने दें और बोरी में भरकर इस्तेमाल करें।

बनाने की विधि: खेत की जुताई के बाद घन जीवामृत का छिड़काव करके मिट्टी में मिला दें। घन जीवामृत का प्रयोग 6 माह तक किया जा सकता है।

(ब) तरल जीवामृत

बनाने की विधि: पहले 200 लीटर पानी क्षमता वाली प्लास्टिक टंकी लें। उसमें 10 किग्रा. गाय का गोबर मिलाएँ। फिर 10 लीटर गौमूत्र और 1 किग्रा. गुड़ चटनी मिलाएँ। इसके बाद 2 किग्रा. बेसन डालें। फिर 50 से 100 ग्राम बरगद या पीपल के पेड़ के नीचे की मिट्टी डालें और डंडे से मिलाएँ। टंकी को जालीदार कपड़े से ढक दें। मिश्रण को दिन में चार बार हिलाएँ। 48 घंटे बाद तैयार हो जाएगा।

प्रयोग करने की विधि: सिंचाई के साथ नाली में पानी के ऊपर ड्रिप की तरह बूंद-बूंद बहाते हुए डालें। सिंचाई के साथ खेत में मिलाएँ। 21 दिनों के अंतराल पर पुनः इसी तरह से खेतों में तरल जीवामृत डालते रहें। जीवामृत का प्रयोग केवल 7 दिनों तक कर सकते हैं।

नीमास्त्र

नीमास्त्र एक कीटनाशक है जिसे नीम की हरी पत्तियों या सूखे फल, गौ मूत्र, गोबर एवं पानी की सहायता से बनाया जाता है। इसका इस्तेमाल फसलों में लगने वाले कीटों के नियंत्रण के लिए किया जाता है। नीमास्त्र रस चूसने वाले कीटों, छोटी सुंडी इल्ली के लिए उपयोगी है।

ISSN: 3049-2211

बनाने की विधि: प्लास्टिक के बर्तन में 5 किग्रा. नीम की पत्तियों को चटनी या पेस्ट बनाकर डालें। इसमें 5 किग्रा. नीम फल को पीसकर व कूटकर डालें। फिर 5 लीटर गौमूत्र और 1 किग्रा. गाय का गोबर मिलाएँ। सभी सामग्री को डंडे से अच्छी तरह चलाएँ। बर्तन को जालीदार कपड़े से ढक दें। यह मिश्रण 48 घंटे में तैयार हो जाएगा। 48 घंटे में चार बार डंडे से हिलाएँ। तैयार घोल को पतले कपड़े से छान लें।

प्रयोग करने की विधि: 2 से 3 लीटर निमास्त्र के अर्क (तैयार घोल) को 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करना चाहिए।

ब्रह्मास्त्र

ब्रह्मास्त्र गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती में प्रयुक्त एक प्रभावी जैव-कीटनाशी है, जो मुख्य रूप से चबाने वाले कीटों के नियंत्रण में उपयोग किया जाता है। यह तंबाकू इल्ली जैसी विनाशकारी इल्ली के साथ-साथ फल एवं तना छेदक कीटों पर प्रभावी होता है। पत्ती खाने वाली इल्ली, सेमीलूपर और आर्मीवर्म के लार्वा चरण में यह उनकी भोजन क्षमता को कम कर उन्हें नष्ट करता है।

बनाने की विधि: ब्रह्मास्त्र बनाने के लिए सबसे पहले 10 लीटर देशी गाय का गौमूत्र लें। इसमें 5 किलोग्राम नीम के पत्ते मिलाएँ। इसके साथ आक, पपीता तथा अरंडी के पत्तों की 2 किलोग्राम चटनी अलग से तैयार करें। अब सभी पत्तियों और तैयार चटनी को गौमूत्र में अच्छी तरह मिलाएँ। इस मिश्रण को धीमी आँच पर तब तक पकाएँ जब तक एक उबाल न आ जाए। उबाल आने के बाद बर्तन को ढककर मिश्रण को 48 घंटे तक ठंडा होने दें। इसके पश्चात घोल को कपड़े से छान लें। ब्रह्मास्त्र के 2.5 से 3.5 लीटर घोल को 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें।

बनाने की विधि: ब्रह्मास्त्र के 2.5 से 3.5 लीटर घोल को 100 लीटर पानी में मिलाकर एक एकड़ फसल पर छिड़काव करें ब्रह्मास्त्र का उपयोग 6 माह तक किया जा सकता है।

निष्कर्ष

गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती न केवल आज की जरूरत है, बल्कि भविष्य की टिकाऊ और पर्यावरण-सहज कृषि का मार्ग भी है। यह पद्धति रासायनिक इनपुट्स पर निर्भरता को कम करके किसानों को उनके

खेत में उपलब्ध जैविक संसाधनों का सदुपयोग करने में सक्षम बनाती है। बीजामृत, जीवामृत, नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र जैसे प्राकृतिक तैयारियों से मिट्टी की उर्वरता, संरचना और सूक्ष्मजीव गतिविधि में सुधार होता है, जिससे फसलें स्वस्थ और रोग-प्रतिरोधी बनती हैं।

इस प्रणाली के अपनाने से उत्पादन लागत में कमी आती है और किसान आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर बनते हैं। साथ ही, यह पर्यावरण प्रदूषण को घटाकर भूमि की दीर्घकालिक उपजाऊ शक्ति बनाए रखती है। रसायन-मुक्त कृषि से उपभोक्ताओं को सुरक्षित, पोषक और शुद्ध भोजन उपलब्ध होता है।

बदलते कृषि परिदृश्य में, जहाँ रासायनिक खेती के दुष्प्रभाव बढ़ रहे हैं, प्राकृतिक खेती एक सुरक्षित और स्थायी विकल्प के रूप में उभर रही है। यदि इसे व्यापक स्तर पर अपनाया जाए, तो इससे न केवल किसानों का जीवन सुधरेगा, बल्कि देश की खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण और ग्रामीण विकास को भी मजबूती मिलेगी। इस प्रकार, गौवंश आधारित प्राकृतिक खेती भारतीय कृषि का भविष्य है, जो धरती, किसान और समाज तीनों के हित में है।

♣♣♣

भारत में मछलियों के प्रमुख रोग: कारण और बचाव

[1]**गंगा राम कमलापुरी***- शोधार्थी, जंतु विज्ञान विभाग, [2]**डॉ. अभिनव सिंह-** सहायक प्राध्यापक और विभागाध्यक्ष जंतु विज्ञान विभाग
आचार्य नरेंद्र देव किसान स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बभनान, गोंडा, (उत्तर प्रदेश)
[3]**डॉ. हरनाम सिंह लोधी-** सहायक प्राध्यापक जंतु विज्ञान विभाग
के.एस. साकेत पी0जी0 कॉलेज ,अयोध्या, (उत्तर प्रदेश)

परिचय

भारत में मछली पालन एक तेजी से उभरता हुआ व्यवसाय है, लेकिन इसमें होने वाली बीमारियाँ मछली पालकों के लिए एक बड़ी चुनौती और आर्थिक हानि का कारण बनती हैं। मछली पालन में बीमारियों का उपचार करने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण बचाव है, क्योंकि एक बार संक्रमण फैलने पर पूरी खेप नष्ट हो सकती है। मछली पालन के दौरान बीमारियों का सही समय पर पता लगाना और उनका उपचार करना अत्यंत आवश्यक है। सघन मत्स्य पालन (Intensive Farming) के कारण रोगों का खतरा बढ़ जाता है, जिससे हर साल उत्पादन में 10-15% की कमी देखी जाती है। रोगों की सही समय पर पहचान और वैज्ञानिक प्रबंधन ही इस व्यवसाय को घाटे से बचा सकता है।मछली के रोगों को मुख्य रूप से उनके संक्रमण के कारकों (कवक, बैक्टीरिया और परजीवी) के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है।

रोग का नाम	रोगजनक	कारक का प्रकार	मुख्य लक्षण	उपचार
ई.यू.एस. (EUS - लाल घाव)	*Aphanomyces invadans*	कवक (Fungus)	शरीर पर गहरे लाल घाव, छिलके गिरना, सुस्ती।	CIFAX (1 लीटर/हेक्टेयर) का छिड़काव या चूना + ब्लीचिंग पाउडर।
सेप्रोलेग्नीयोसिस (Saprolegniasis)	*Saprolegnia*	कवक (Fungus)	शरीर पर सफेद/भूरे रंग के रूई जैसे गुच्छे।	3% नमक के घोल या मालकाइट ग्रीन (0.1 mg/L) में स्नान।
गिल रोट (Gill Rot)	*Branchiomyces*	कवक (Fungus)	गलफड़ों का रंग उड़ना (ग्रे/सफेद) और सड़न।	तालाब में चूना (200kg/ha) डालना और जैविक कचरा कम करना।

ISSN: 3049-2211

ड्रॉप्सी (Dropsy)	*Aeromonas punctata*	जीवाणु (Bacteria)	पेट का असामान्य रूप से फूलना, आँखें बाहर निकलना।	जल की गुणवत्ता सुधारें; भोजन में Oxytetracycline (50mg/kg)।
फिन और टेल रोट (Fin & Tail Rot)	*Aeromonas & Pseudomonas*	जीवाणु (Bacteria)	पंखों और पूंछ के किनारों का सफेद या धुंधला पड़ना। पंखों का रेशेदार होकर फटना या गलना। पूंछ के आधार पर लालिमा या खून के धब्बे दिखना। मछली की गति का कम होना और सुस्ती।	**नमक स्नान:** 2-3% नमक के घोल में 2-5 मिनट तक डुबोएं। **पोटाश (KMNO4):** 5 मिलीग्राम/लीटर के घोल में 'डिप ट्रीटमेंट' दें। **एंटीबायोटिक:** विशेषज्ञ की सलाह पर भोजन में *Oxytetracycline* मिलाएं
कॉलमनारिस (Columnaris)	*Flavobacterium columnare*	जीवाणु (Bacteria)	शरीर और मुँह पर सफेद/मटमैले रूई जैसे धब्बे। पीठ के पंख के पास 'काठी' (Saddle-back) जैसा घाव। गलफड़ों का सड़ना और साँस लेने में तकलीफ।	**नमक स्नान:** 1-3% नमक के घोल में उपचार। **पोटाश:** 2-4 mg/L पोटेशियम परमैंगनेट का प्रयोग। **एंटीबायोटिक:** भोजन में *Oxytetracycline* मिलाएँ।
इक्थियोफिथिरियस (White Spot)	*Ichthyophthirius multifiliis*	प्रोटोजोआ (Protozoa)	शरीर और गलफड़ों पर छोटे सफेद दाने।	जल का तापमान बढ़ाना; Formalin (20-25 mg/L) का प्रयोग।
ट्राइकोडिनियासिस	*Trichodina* प्रजाति	प्रोटोजोआ (Protozoa)	शरीर को सतह पर रगड़ना, अत्यधिक बलगम, त्वचा का धुंधलापन और सुस्ती।	नमक स्नान (2-3%) या पोटाश (2-5 mg/L) का प्रयोग।
आर्गेलोसिस (Fish Louse)	*Argulus* प्रजाति	बाहरी परजीवी (Crustacean)	मछली का शरीर रगड़ना, चपटे जुएं (Lice) दिखाई देना।	Butox या Deltamethrin का प्रयोग; तालाब में बांस के खंभे गाड़ना।
लर्निया (Anchor Worm)	*Lernaea* प्रजाति	बाहरी परजीवी (Crustacean)	शरीर में धंसे हुए धागे जैसे कीड़े और वहां सूजन।	1% नमक स्नान या तालाब में पोटेशियम परमैंगनेट का छिड़काव।

मछलियों में रोगों के मुख्य कारण

मछलियों में बीमारियाँ अचानक नहीं आतीं, बल्कि इसके पीछे कई कारक होते हैं, भारत में मछलियों में बीमारियाँ मुख्य रूप से तीन कारकों के असंतुलन से उत्पन्न होती हैं:

1. जैविक कारक (Biological Factors): मछली रोगों के लिए जैविक कारक (Biological Factors) वे सूक्ष्मजीव होते हैं जो मछलियों के शरीर पर हमला करके उन्हें बीमार बनाते हैं।इनमें बैक्टीरिया, फंगस और प्रोटोजोआ जैसे परजीवी शामिल हैं।

2. पर्यावरणीय कारक (Environmental Factors): पानी में घुली ऑक्सीजन की कमी, अमोनिया का उच्च स्तर, pH में उतार-चढ़ाव और सर्दियों में तापमान का अचानक गिरना रोगों के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ पैदा करते हैं। मछली पालन में पर्यावरणीय कारक (Environmental Factors) वे भौतिक और रासायनिक तत्व हैं जो पानी की गुणवत्ता निर्धारित करते हैं। जब ये कारक असंतुलित होते हैं, तो मछलियाँ तनाव (Stress) में आ जाती हैं, जिससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है। प्रमुख पर्यावरणीय कारक निम्नलिखित हैं:

- **तापमान (Temperature):** मछलियाँ ठंडे खून वाली (Cold-blooded) जीव होती हैं। तापमान में अचानक गिरावट या वृद्धि उनके मेटाबॉलिज्म को प्रभावित करती है। उदाहरण के लिए, EUS रोग कम तापमान (सर्दियों) में अधिक फैलता है, जबकि Columnaris गर्म पानी में।
- **घुलित ऑक्सीजन (Dissolved Oxygen):** पानी में ऑक्सीजन का स्तर कम होने पर मछलियाँ सतह पर आकर हवा लेने लगती हैं। ऑक्सीजन की कमी से उनकी वृद्धि रुक जाती है और वे दम घुटने से मर सकती हैं।
- **pH स्तर:** पानी का pH मान 7.5 से 8.5 के बीच सबसे अच्छा माना जाता है। बहुत अधिक अम्लीय या बहुत अधिक क्षारीय पानी मछली की त्वचा और गलफड़ों को जला देता है।

ISSN: 3049-2211

- **अमोनिया (Ammonia):** मछलियों के मल और बचे हुए भोजन के सड़ने से अमोनिया बनता है। यह एक अत्यंत विषैला कारक है जो सीधे मछली के रक्त और तंत्रिका तंत्र पर हमला करता है।
- **पानी का धुंधलापन (Turbidity):** पानी में मिट्टी या गाद की अधिकता से प्रकाश नीचे तक नहीं पहुँच पाता और मछलियों के गलफड़ों में गंदगी जमा हो जाती है, जिससे उन्हें सांस लेने में दिक्कत होती है।

3. प्रबंधन संबंधी कमियाँ: तालाब में मछलियों की अत्यधिक संख्या (Overcrowding), खराब गुणवत्ता वाला भोजन और संक्रमित उपकरणों का उपयोग संक्रमण को तेजी से फैलाता है।

- **परिवहन के दौरान चोट:** मछलियों को एक स्थान से दूसरे स्थान ले जाते समय लगी चोटें कवक (Fungus) और बैक्टीरिया के लिए प्रवेश द्वार का काम करती हैं।
- **अत्यधिक घनत्व (Overcrowding):** तालाब की क्षमता से अधिक मछलियाँ डालना। इससे ऑक्सीजन की कमी होती है और संक्रमण एक मछली से दूसरी में बिजली की गति से फैलता है।
- **खराब आहार प्रबंधन:** जरूरत से ज्यादा भोजन (Overfeeding) देना। बचा हुआ सड़ा भोजन तालाब की तली में अमोनिया और जहरीली गैसें पैदा करता है, जो मछलियों के गलफड़ों को नुकसान पहुँचाती हैं।
- **संक्रमित उपकरणों का उपयोग:** एक बीमार तालाब में इस्तेमाल किए गए जाल (Nets), बाल्टी या अन्य उपकरणों को बिना साफ किए दूसरे स्वस्थ तालाब में उपयोग करना।
- **क्वारंटाइन (Quarantine) की कमी:** नई खरीदी गई मछलियों को सीधे पुराने तालाब में डाल देना। नए बीज को कम से कम 10-15 दिन अलग रखकर जाँच लेना चाहिए।
- **पानी की स्वच्छता की अनदेखी:** समय-समय पर तालाब का पानी न बदलना या तलछट (Sludge) की सफाई न करना।

प्रमुख मछली रोग और उनके लक्षण

भारत में मछलियों में होने वाले रोगों को मुख्य रूप से 3 श्रेणियों में बाँटा जा सकता है:

1. कवक जनित रोग:

- **'लाल धब्बा रोग' (Red Spot Disease) Epizootic Ulcerative Syndrome (EUS):** जिसे 'लाल धब्बा रोग' (Red Spot Disease) के नाम से भी जाना जाता है, मछलियों की एक अत्यंत संक्रामक और विनाशकारी बीमारी है। यह रोग मुख्य रूप से ताजे और खारे पानी की मछलियों को प्रभावित करता है और इससे भारी मृत्यु दर हो सकती है।
- **सेप्रोलेग्नीयोसिस (Saprolegniasis):** यह सबसे आम कवक रोग है। इसमें मछली के शरीर और गलफड़ों पर सफेद या भूरे रंग के रूई जैसे गुच्छे दिखाई देते हैं। यह रोग अक्सर चोट लगने के बाद होता है।
- **ब्रांकिओमाइसिस (Branchiomycosis):** इसे 'गिल रोट' (Gill Rot) भी कहते हैं। इसमें मछलियों के गलफड़े सड़ने लगते हैं और वे सांस लेने के लिए सतह पर आकर हवा पीने की कोशिश करती हैं।

2. जीवाणु जनित रोग:

- **ड्रॉप्सी (Dropsy):** इस रोग में मछली का पेट फूल जाता है और उसकी आंखें बाहर की ओर उभर आती हैं।
- **फिन और टेल रोट (Fin and Tail Rot):** इसमें मछलियों के पंख और पूंछ किनारों से सफेद होकर गलने लगते हैं।
- **कॉलमनेरिस (Columnaris)** ताजे पानी की मछलियों में होने वाला एक अत्यंत संक्रामक जीवाणु संक्रमण (Bacterial Infection) है। यह रोग ***Flavobacterium columnare*** नामक बैक्टीरिया के कारण होता है और इसकी रुई जैसी बनावट के कारण अक्सर इसे गलती से फंगल इन्फेक्शन समझ लिया जाता है।

3. परजीवी रोग:

- **इक्थियोफिथिरियस (Ich / White Spot Disease):** शरीर, पंखों और गलफड़ों पर छोटे सफेद दाने या धब्बे दिखाई देते हैं
- **ट्राइकोडिनियासिस (Trichodiniasis):** ताजे और खारे पानी की मछलियों में होने वाला एक सामान्य परजीवी रोग है। यह मुख्य रूप से *Trichodina* नामक सूक्ष्म, सिलियायुक्त (ciliated) प्रोटोजोआ के कारण होता है।
- **आर्गेलोसिस (Argulosis):** यह 'फिश लाउस' (Fish Louse) नामक परजीवी के कारण होता है। मछली अपने शरीर को किनारों पर घिसती है और सुस्त हो जाती है।
- **लर्निया (Anchor Worm):** परजीवी मछली की त्वचा में धंस जाते हैं, जिससे वहां घाव और सूजन आ जाती है

रोगों से बचाव और प्रबंधन

मछली पालन में रोगों का प्रबंधन एक अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है, क्योंकि जल के भीतर बीमारी का पता लगाना और उसका उपचार करना स्थलीय पशुपालन की तुलना में अधिक जटिल होता है। रोगों से बचाव और उनके प्रभावी प्रबंधन के लिए **"निवारण उपचार से बेहतर**

ISSN: 3049-2211

है" (Prevention is better than cure) के सिद्धांत को अपनाना अनिवार्य है। यहाँ रोगों से बचाव और प्रबंधन के प्रमुख चरणों का विस्तृत विवरण दिया गया है:

1. वैज्ञानिक तालाब प्रबंधन:

तालाब की तैयारी ही रोगों को रोकने की पहली दीवार है।

- **सुखाना और जुताई:** मछली के नए बीज डालने से पहले तालाब को पूरी तरह सुखाकर उसकी धूप में जुताई करनी चाहिए ताकि तलहटी में मौजूद हानिकारक बैक्टीरिया और परजीवी नष्ट हो जाएं।
- **चूने का प्रयोग:** चूना न केवल पानी के pH को संतुलित करता है, बल्कि एक कीटाणुनाशक के रूप में भी कार्य करता है। सामान्यतः 200-250 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से चूने का छिड़काव करना चाहिए।

2. जल की गुणवत्ता का नियंत्रण:

अधिकांश रोग पानी की गुणवत्ता खराब होने के कारण शुरू होते हैं।

- **ऑक्सीजन प्रबंधन:** सुबह के समय ऑक्सीजन की कमी होने की संभावना रहती है। इसके लिए ऐरेटर (Aerator) का उपयोग करें या ताजे पानी की आपूर्ति करें।
- **अमोनिया नियंत्रण:** भोजन की मात्रा को नियंत्रित रखें। अधिक भोजन पानी में सड़कर जहरीली अमोनिया बनाता है।
- **pH का स्तर:** पानी का pH हमेशा 7.5 से 8.5 के बीच बनाए रखें।

3. बीज चयन और संगरोध:

संक्रमित बीज पूरे तालाब को तबाह कर सकता है।

- **विश्वसनीय स्रोत:** केवल प्रमाणित हैचरी से ही बीज खरीदें।
- **संगरोध (Quarantine):** नए खरीदे गए बीज को सीधे मुख्य तालाब में न डालें। उन्हें कम से कम 10-15 दिनों के लिए एक अलग टैंक में रखें और उनके स्वास्थ्य की निगरानी करें।
- **बीज उपचार:** बीज को मुख्य तालाब में छोड़ने से पहले 2% नमक के घोल या पोटेशियम परमैंगनेट के हल्के घोल से स्नान (Bath treatment) कराएं।

4. आहार प्रबंधन:

मछली की रोग प्रतिरोधक क्षमता उसके पोषण पर निर्भर करती है।

- **संतुलित आहार:** विटामिन और खनिजों से भरपूर आहार दें।
- **समय और मात्रा:** मछलियों को निश्चित समय पर आहार दें और उतना ही दें जितना वे 1-2 घंटे में खा सकें।

5. जैविक सुरक्षा:

बीमारियों को बाहर से आने से रोकना ही जैविक सुरक्षा है।

- जाल, बाल्टी और अन्य उपकरणों को एक तालाब से दूसरे तालाब में ले जाने से पहले पोटेशियम परमैंगनेट के घोल से धोएं।
- तालाब के पास बाहरी जानवरों और पक्षियों का प्रवेश नियंत्रित करें, क्योंकि वे परजीवियों के वाहक हो सकते हैं।

6. नियमित निगरानी और त्वरित उपचार:

- **लक्षणों की पहचान:** यदि मछलियाँ सतह पर हांफ रही हैं, शरीर रगड़ रही हैं, या उनके शरीर पर धब्बे दिख रहे हैं, तो तुरंत विशेषज्ञों से संपर्क करें।
- **मृत मछलियों का निस्तारण:** बीमार या मृत मछलियों को तुरंत निकालें और उन्हें जमीन में गहरा गाड़ दें।
- **दवाओं का प्रयोग:** भारत में रोगों के नियंत्रण के लिए CIFAX, पोटेशियम परमैंगनेट, चूना और साधारण नमक का उपयोग प्रभावी माना जाता है। एंटीबायोटिक्स का उपयोग केवल अंतिम विकल्प के रूप में और विशेषज्ञ की सलाह पर ही करें।

सामान्य उपचार विधियाँ

मछली पालन में रोगों का उपचार अन्य पशुओं की तुलना में अलग होता है क्योंकि दवा को सीधे पानी में या भोजन के साथ देना पड़ता है। उपचार शुरू करने से पहले रोग की सही पहचान (बैक्टीरियल, फंगल या परजीवी) होना अनिवार्य है।

रोग का प्रकार	उपचार सामग्री	प्रयोग विधि
कवक	पोटेशियम परमैंगनेट / साधारण नमक	3% नमक के घोल या 5 मिग्रा/ली. पोटाश घोल में स्नान।
जीवाणु	सिफेक्स (CIFAX) / BKC 80%	1 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से पानी का उपचार।
परजीवी	मैलाथियान / नीला थोथा	0.25 मिग्रा/लीटर मैलाथियान का छिड़काव।

यहाँ मछलियों के लिए उपयोग की जाने वाली सामान्य उपचार विधियाँ विस्तार से दी गई हैं:

1. स्नान उपचार:

यह विधि छोटे टैंकों या मछली के बीज (Seed) के उपचार के लिए सबसे प्रभावी है। इसमें मछलियों को एक निश्चित समय के लिए दवा युक्त पानी में रखा जाता है।

- **नमक स्नान (Salt Bath):** 2% से 3% साधारण नमक (Sodium Chloride) के घोल में मछलियों को 2-5 मिनट तक रखना। यह परजीवियों (जैसे Trichodina) और फंगस को हटाने का सबसे सस्ता और प्रभावी तरीका है।
- **पोटेशियम परमैंगनेट स्नान:** 5 मिलीग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में मछलियों को नहलाने से बाहरी बैक्टीरिया और घाव ठीक होते हैं।

ISSN: 3049-2211

2. तालाब में सीधा छिड़काव:

जब रोग पूरे तालाब में फैल गया हो, तो पूरी जल राशि का उपचार किया जाता है।

- **चूने का प्रयोग (Liming):** यह पानी के pH को बढ़ाता है और हानिकारक कीटाणुओं को मारता है। आमतौर पर 200-250 किलो प्रति हेक्टेयर की दर से इसका प्रयोग किया जाता है।
- **CIFAX का प्रयोग:** यह भारत में विकसित एक अत्यंत प्रभावी औषधि है, विशेषकर EUS (लाल धब्बा रोग) के लिए। इसे पानी में घोलकर पूरे तालाब में छिड़का जाता है।
- **औद्योगिक रंजक (Dyes):** मिथाइलिन ब्लू और मैलाकाइट ग्रीन का उपयोग फंगल और प्रोटोजोआ रोगों के लिए किया जाता है, हालांकि इनका उपयोग सावधानी से करना चाहिए।

3. आहार के माध्यम से उपचार:

यदि संक्रमण आंतरिक है (जैसे आंतों के बैक्टीरिया), तो दवाओं को भोजन में मिलाकर दिया जाता है।

- **एंटीबायोटिक्स:** टेरामाइसिन (Terramycin) या ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन जैसी दवाओं को विशेषज्ञों की सलाह पर आटे या मछली के चारे में मिलाकर दिया जाता है।
- **विटामिन और सप्लीमेंट:** मछली की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए भोजन में विटामिन-सी और बी-कॉम्प्लेक्स मिलाया जाता है।

4. स्वैब उपचार:

यह विधि केवल बड़ी और कीमती मछलियों (जैसे ब्रोडर या सजावटी मछली) के लिए उपयोग की जाती है।

इसमें संक्रमित मछली को पानी से निकालकर उसके घाव पर सीधे एंटीसेप्टिक जैसे पोविडोन-आयोडीन या लाल दवा का गाढ़ा घोल रुई (Swab) की मदद से लगाया जाता है।

5. जैविक उपचार:

इसमें रसायनों के बजाय प्राकृतिक तरीकों का उपयोग होता है।

- **लहसुन और हल्दी:** कई किसान लहसुन के अर्क का उपयोग एंटी-बैक्टीरियल के रूप में चारे में करते हैं।
- **पानी बदलना:** 25-30% दूषित पानी निकालकर ताजा पानी भरना ही कई बार आधे रोगों को ठीक कर देता है क्योंकि इससे अमोनिया का स्तर कम हो जाता है।

उपचार के दौरान सावधानियाँ:

1. एरेशन (Aeration): उपचार के दौरान पानी में ऑक्सीजन की कमी हो सकती है, इसलिए एरेटर (Aerator) चलाकर रखें।

2. दवा की मात्रा: दवा की अधिक मात्रा मछलियों के लिए जहरीली हो सकती है, इसलिए तालाब के क्षेत्रफल और गहराई के अनुसार सटीक गणना करें।

3. धूप का समय: अधिकांश रसायनों का छिड़काव सुबह के समय करना बेहतर होता है जब तापमान कम हो।

निष्कर्ष

"निवारण उपचार से बेहतर है" (Prevention is better than cure) ,भारत में मछली पालन के क्षेत्र में रोगों का प्रबंधन केवल उत्पादकता बढ़ाने का साधन नहीं, बल्कि इस उद्योग के अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। निष्कर्ष के रूप में यह कहा जा सकता है कि अधिकांश बीमारियाँ खराब जल गुणवत्ता और दोषपूर्ण प्रबंधन का परिणाम होती हैं। भारत की जलवायु में सर्दियों के दौरान EUS और गर्मियों में बैक्टीरियल संक्रमण जैसी चुनौतियाँ बनी रहती हैं, जिनसे निपटने के लिए किसानों को पारंपरिक तरीकों के साथ-साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाना होगा।भविष्य में सफल मछली पालन के लिए 'जैविक सुरक्षा' (Biosecurity) और 'नियमित निगरानी' को मूल मंत्र बनाना आवश्यक है। प्रमाणित बीज का चयन, तालाब की समय-समय पर सफाई, और CIFAX जैसे आधुनिक उपचारों का सही ज्ञान किसानों को बड़े आर्थिक नुकसान से बचा सकता है। अंततः, यदि किसान केवल उपचार के बजाय बचाव (Prevention) पर ध्यान केंद्रित करें और तकनीक का सही लाभ उठाएं, तो भारत न केवल मछली उत्पादन में अग्रणी बना रहेगा, बल्कि वैश्विक स्तर पर गुणवत्तापूर्ण मत्स्य उत्पादों की आपूर्ति भी सुनिश्चित कर सकेगा। सतत विकास के लिए मत्स्य विशेषज्ञों और सरकारी योजनाओं (जैसे प्रधानमंत्री मत्स्य संपदा योजना) के साथ जुड़ाव भी इस दिशा में एक क्रांतिकारी कदम साबित हो सकता है।

♣♣♣

हाइड्रोपोनिक्स: आधुनिक कृषि में क्रांति

[1]**बरखा सिन्हा-** उद्यानिकी छात्रा,
[2]**डॉ. राकेश गिरी गोस्वामी-** सहायक प्राध्यापक, मृदा विज्ञान
उद्यानिकी महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र बिलासपुर, (छ.ग.)

हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी के बिना पौधे उगाने की एक अभिनव विधि है, जहाँ पोषक तत्वों से भरपूर पानी के घोल पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक तत्व प्रदान करते हैं। इस मिट्टी रहित खेती प्रणाली ने फसलों की उच्च पैदावार पैदा करने, पानी का संरक्षण करने और नियंत्रित वातावरण में बढ़ती परिस्थितियों को अनुकूलित करने की अपनी क्षमता के लिए अपार लोकप्रियता हासिल की है। हाइड्रोपोनिक्स पारंपरिक कृषि द्वारा उत्पन्न कई चुनौतियों, जैसे मिट्टी का क्षरण, पानी की कमी और जलवायु परिवर्तनशीलता के लिए एक आशाजनक समाधान प्रदान करता है।

बढ़ते शहरीकरण, सीमित कृषि योग्य भूमि और टिकाऊ खाद्य उत्पादन की मांग के साथ, हाइड्रोपोनिक्स फसलों की खेती के लिए एक व्यवहार्य विकल्प के रूप में उभरा है, विशेष रूप से शहरी क्षेत्रों, ग्रीनहाउस और खराब मिट्टी की स्थिति वाले क्षेत्रों में। यह लेख हाइड्रोपोनिक्स के सिद्धांतों, विभिन्न हाइड्रोपोनिक प्रणालियों, उनके लाभों और चुनौतियों, विभिन्न फसल उत्पादन क्षेत्रों में अनुप्रयोगों और इस बढ़ते उद्योग के लिए भविष्य की संभावनाओं पर गहराई से चर्चा करता है।

हाइड्रोपोनिक्स के सिद्धांत

इसके मूल में, हाइड्रोपोनिक्स सीधे पौधों की जड़ों तक पानी, पोषक तत्वों और ऑक्सीजन का संतुलित और सटीक मिश्रण पहुँचाने पर निर्भर करता है। यह नियंत्रित वातावरण सुनिश्चित करता है कि पौधों को उनकी ज़रूरत के हिसाब से पोषक तत्व उचित मात्रा में मिलें, बिना किसी माध्यम के मिट्टी की ज़रूरत के। मिट्टी को दरकिनार करके, पौधे तेजी से विकास और कुशल पोषक तत्व अवशोषण पर ध्यान केंद्रित कर सकते हैं, जिसके परिणामस्वरूप अक्सर तेज़ विकास दर, अधिक उपज और बेहतर फसल गुणवत्ता होती है।

हाइड्रोपोनिक सिस्टम के मूल तत्वों में शामिल हैं:

ISSN: 3049-2211

पानी: एक माध्यम जिसके माध्यम से पोषक तत्वों को घोला जाता है और पौधों तक पहुँचाया जाता है।

पोषक तत्व: आवश्यक मैक्रो (नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटेशियम) और माइक्रोन्यूट्रिएंट्स (जस्ता, लोहा, मैग्नीशियम) का सावधानीपूर्वक कैलिब्रेटेड मिश्रण जो इष्टतम पौधे के विकास के लिए आवश्यक हैं।

ऑक्सीजन: जड़ों को पर्याप्त ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है, विशेष रूप से पानी आधारित प्रणालियों में, जड़ सड़न को रोकने और स्वस्थ विकास सुनिश्चित करने के लिए।

प्रकाश: पौधों को प्रकाश संश्लेषण के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है, और नियंत्रित हाइड्रोपोनिक प्रणालियों में, एलईडी जैसे कृत्रिम प्रकाश स्रोतों का उपयोग अक्सर प्राकृतिक सूर्य के प्रकाश को पूरक या बदलने के लिए किया जाता है।

हाइड्रोपोनिक सिस्टम के प्रकार

कई प्रकार के हाइड्रोपोनिक सिस्टम हैं, जिनमें से प्रत्येक में अद्वितीय विशेषताएं हैं जो विभिन्न फसलों, बढ़ते वातावरण और उत्पादन पैमाने को पूरा करती हैं। सबसे आम हाइड्रोपोनिक सिस्टम में शामिल हैं:

1. पोषक तत्व फिल्म तकनीक (NFT)

पोषक तत्व फिल्म तकनीक सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली हाइड्रोपोनिक प्रणालियों में से एक है। एनएफटी में, पोषक तत्वों से भरपूर पानी की एक उथली धारा पौधों की जड़ों के ऊपर एक पतली फिल्म के रूप में बहती है, जिससे जड़ें बहते हुए घोल से पोषक तत्वों और ऑक्सीजन दोनों को अवशोषित कर पाती हैं। पानी को लगातार पुनःपरिचालित किया जाता है, जिससे पानी की बर्बादी कम से कम होती है।

पोषक तत्व फिल्म तकनीक के लाभ:

- पानी और पोषक तत्वों का कुशल उपयोग।
- पोषक तत्वों के स्तर की आसान निगरानी और रखरखाव।
- न्यूनतम बढ़ते माध्यम की आवश्यकता।

पोषक तत्व फिल्म तकनीक के चुनौतियाँ:

- यदि पानी का प्रवाह बाधित होता है तो जड़ें सूख सकती हैं।
- पानी के तापमान और पोषक तत्वों की सांद्रता पर सावधानीपूर्वक नियंत्रण की आवश्यकता होती है।
- NFT विशेष रूप से पत्तेदार साग, जड़ी-बूटियाँ और स्ट्रॉबेरी उगाने के लिए लोकप्रिय है।

2. डीप वॉटर कल्चर (DWC)

डीप वॉटर कल्चर सिस्टम में पौधों की जड़ों को अच्छी तरह से ऑक्सीजन युक्त पोषक तत्व के घोल में लटकाया जाता है। जड़ें पानी में डूबी रहती हैं, और जड़ों को दम घुटने से बचाने के लिए एयर स्टोन या डिफ्यूज़र के ज़रिए ऑक्सीजन की आपूर्ति की जाती है।

डीप वॉटर कल्चर लाभ:

- सरलता और कम लागत।
- निरंतर पोषक तत्वों की उपलब्धता के कारण पौधों की तेज़ी से वृद्धि।
- छोटे पैमाने पर उगाने वालों और शुरुआती लोगों के लिए आदर्श।

डीप वॉटर कल्चर चुनौतियाँ:

- जड़ें जलजनित रोगों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होती हैं।
- ऑक्सीजन और पोषक तत्वों के संतुलन को बनाए रखने के लिए निरंतर निगरानी की आवश्यकता होती है।
- DWC बड़े, पानी पसंद करने वाले पौधों जैसे लेट्यूस, पालक और खीरे उगाने के लिए उपयुक्त है।

3. ईब और फ्लो (फ्लड और ड्रेन)

ईब और फ्लो सिस्टम में, पौधों को परलाइट या बजरी जैसे निष्क्रिय माध्यम से भरे कंटेनरों में उगाया जाता है। बढ़ते माध्यम को समय-समय पर पोषक तत्व के घोल से भर दिया जाता है, जिसके बाद घोल बह जाता है, जिससे जड़ें ऑक्सीजन ले पाती हैं।

फ्लड और ड्रेन लाभ:

- जड़ों को चक्रों में पानी और ऑक्सीजन दोनों प्रदान करता है, जिससे मजबूत विकास को बढ़ावा मिलता है।
- विभिन्न पौधों के आकार के लिए लचीला और स्केलेबल सिस्टम।
- माध्यम चक्रों के बीच कुछ नमी बनाए रखता है, जिससे लगातार पानी देने की आवश्यकता कम हो जाती है।

फ्लड और ड्रेन चुनौतियाँ:

- एक विश्वसनीय टाइमर और पंप सिस्टम की आवश्यकता होती है।
- यदि बाढ़ के चक्र बहुत कम हैं, तो जड़ें सूख सकती हैं।
- ईब और फ्लो सिस्टम का इस्तेमाल आमतौर पर बड़े पौधों के लिए किया जाता है, जिसमें टमाटर, मिर्च और फूल वाली फसलें शामिल हैं।

ISSN: 3049-2211

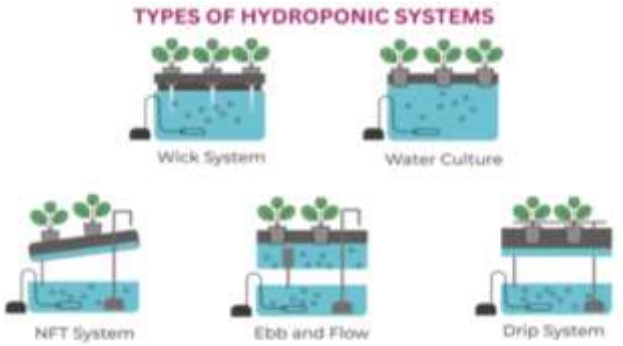

4. ड्रिप सिस्टम

ड्रिप सिस्टम में ट्यूब और ड्रिप एमिटर के नेटवर्क के माध्यम से प्रत्येक पौधे के आधार पर सीधे पोषक तत्व समाधान पहुंचाना शामिल है। इस सिस्टम को रीसर्क्युलेटिंग या नॉन-रीसर्क्युलेटिंग (ड्रेन-टू-वेस्ट) सेटअप के रूप में कॉन्फ़िगर किया जा सकता है।

लाभ:

- अलग-अलग पौधों को पानी और पोषक तत्व पहुंचाने पर सटीक नियंत्रण।
- छोटे और बड़े पैमाने पर संचालन दोनों के लिए उपयुक्त।
- कोको कॉयर, रॉकवूल और परलाइट सहित कई तरह के बढ़ते मीडिया को समायोजित कर सकता है।

चुनौतियाँ:

- अगर पोषक तत्वों के घोल को ठीक से फ़िल्टर नहीं किया जाता है, तो एमिटर बंद हो सकते हैं।
- समान वितरण सुनिश्चित करने के लिए नियमित रखरखाव की आवश्यकता होती है।
- ड्रिप सिस्टम बहुमुखी हैं और स्ट्रॉबेरी, खीरे और बैंगन सहित कई तरह की फसलें उगाने के लिए उपयोग किए जाते हैं।

5. एरोपोनिक्स

एरोपोनिक्स एक उन्नत हाइड्रोपोनिक तकनीक है जिसमें पौधों की जड़ों को हवा में लटकाया जाता है और नियमित अंतराल पर पोषक तत्वों के घोल से छिड़का जाता है। यह विधि उत्कृष्ट ऑक्सीजनेशन और पोषक तत्वों का अवशोषण प्रदान करती है।

एरोपोनिक्स लाभ:

- पानी और पोषक तत्वों का अत्यधिक कुशल उपयोग।
- इष्टतम जड़ वातन के कारण तेज़ विकास दर।
- किसी बढ़ते माध्यम की आवश्यकता नहीं।

एरोपोनिक्स चुनौतियाँ:

- महंगा और तकनीकी रूप से जटिल।
- सिस्टम विफलताओं, जैसे पंप की खराबी के प्रति अत्यधिक संवेदनशील।
- एरोपोनिक्स का उपयोग आमतौर पर पत्तेदार साग, जड़ी-बूटियों और औषधीय पौधों जैसी उच्च मूल्य वाली फसलों के लिए किया जाता है।

6. बाती प्रणाली

बाती प्रणाली में, पोषक तत्व का घोल कपास या नायलॉन जैसे शोषक पदार्थ से बनी बाती के माध्यम से पौधे की जड़ों तक खींचा जाता है। जड़ों को वर्मीक्यूलाइट या परलाइट जैसे बढ़ते माध्यम में लगाया जाता है, और बाती निष्क्रिय रूप से पानी और पोषक तत्व पहुँचाती है।

लाभ:

- सरल और कम लागत वाली प्रणाली।
- किसी पंप या टाइमर की आवश्यकता नहीं है।
- छोटे पैमाने पर या इनडोर बागवानी के लिए आदर्श।

चुनौतियाँ:

- सीमित पानी और पोषक तत्व वितरण, जो इसे बड़े या तेज़ी से बढ़ने वाले पौधों के लिए अनुपयुक्त बनाता है।
- यदि बाती पर्याप्त पोषक तत्व नहीं पहुँचा पाती है, तो पोषक तत्वों के असंतुलन की संभावना होती है।
- बाती प्रणाली का उपयोग आमतौर पर जड़ी-बूटियों और घरेलू पौधों जैसे छोटे पौधों के लिए किया जाता है।

हाइड्रोपोनिक्स के लाभ

हाइड्रोपोनिक्स की बढ़ती लोकप्रियता पारंपरिक मिट्टी आधारित कृषि की तुलना में इसके कई लाभों के कारण है:

जल संरक्षण

हाइड्रोपोनिक्स के प्रमुख लाभों में से एक इसका पानी का कुशल उपयोग है। पारंपरिक कृषि में अक्सर अपवाह, वाष्पीकरण और अकुशल सिंचाई प्रथाओं के कारण बड़ी मात्रा में पानी बर्बाद होता है। इसके विपरीत, हाइड्रोपोनिक सिस्टम पानी को फिर से प्रसारित करते हैं, जिससे कुल पानी की खपत 90% तक कम हो जाती है। यह हाइड्रोपोनिक्स को पानी की कमी वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से मूल्यवान बनाता है।

तेज़ विकास दर और अधिक उपज

पौधों को पानी, पोषक तत्वों और ऑक्सीजन की निरंतर आपूर्ति प्रदान करके, हाइड्रोपोनिक्स पौधों की वृद्धि को तेज करता है। हाइड्रोपोनिक रूप से उगाए गए पौधे अक्सर मिट्टी में उगाए गए पौधों की

ISSN: 3049-2211

तुलना में तेज़ी से परिपक्व होते हैं और अधिक उपज देते हैं। यह विशेष रूप से उच्च बाजार मांग वाली फसलों, जैसे पत्तेदार साग, जड़ी-बूटियाँ और स्ट्रॉबेरी के लिए महत्वपूर्ण है।

स्थान दक्षता

हाइड्रोपोनिक सिस्टम पारंपरिक खेतों की तुलना में छोटे क्षेत्रों में स्थापित किए जा सकते हैं, जो उन्हें शहरी वातावरण या सीमित भूमि उपलब्धता वाले क्षेत्रों के लिए आदर्श बनाता है। हाइड्रोपोनिक्स का एक उपसमूह, वर्टिकल फ़ार्मिंग, फसलों को ढेरों परतों में उगाने की अनुमति देता है, जिससे जगह का अधिकतम उपयोग होता है। यह नवाचार शहरी खेती के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ ज़मीन की बहुत ज़्यादा ज़रूरत होती है।

कीट और रोग नियंत्रण

मिट्टी को खत्म करके, हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी से होने वाले कीटों और बीमारियों, जैसे कि जड़ सड़न, नेमाटोड और फंगल संक्रमण के जोखिम को कम करता है। इससे पौधे स्वस्थ होते हैं और रासायनिक कीटनाशकों की ज़रूरत कम होती है, जिससे खेती के ज़्यादा टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल तरीके अपनाने में मदद मिलती है।

साल भर उत्पादन

हाइड्रोपोनिक सिस्टम अक्सर नियंत्रित वातावरण में रखे जाते हैं, जैसे कि ग्रीनहाउस या इनडोर फ़ार्म, जहाँ तापमान, प्रकाश और आर्द्रता को नियंत्रित किया जा सकता है। यह मौसमी बदलावों या प्रतिकूल मौसम की स्थिति से स्वतंत्र, निरंतर, साल भर उत्पादन की अनुमति देता है।

सटीक पोषक तत्व नियंत्रण

हाइड्रोपोनिक्स उत्पादकों को पौधों को सटीक सांद्रता में उनकी ज़रूरत के सटीक पोषक तत्व प्रदान करने में सक्षम बनाता है। नियंत्रण का यह स्तर सुनिश्चित करता है कि पौधों को ज़रूरत से ज़्यादा खाद या कम पोषण न मिले, जिससे इष्टतम विकास हो और पोषक तत्वों की बर्बादी कम हो।

हाइड्रोपोनिक्स की चुनौतियाँ और सीमाएँ

इसके कई फ़ायदों के बावजूद, हाइड्रोपोनिक्स कई चुनौतियाँ भी पेश करता है जिन्हें संबोधित करने की ज़रूरत है:

उच्च प्रारंभिक लागत

हाइड्रोपोनिक सिस्टम स्थापित करना महंगा हो सकता है, खासकर बड़े पैमाने पर या हाई-टेक सिस्टम जैसे कि एरोपोनिक्स या वर्टिकल फ़ार्म के लिए। पंप, लाइट, सेंसर और ग्रोइंग स्ट्रक्चर जैसे उपकरणों की लागत छोटे पैमाने के किसानों या विकासशील क्षेत्रों में रहने वालों के लिए निषेधात्मक हो सकती है।

तकनीकी जटिलता

हाइड्रोपोनिक सिस्टम में पोषक तत्वों के घोल, पानी की गुणवत्ता और पर्यावरण की स्थितियों की सावधानीपूर्वक निगरानी और प्रबंधन की आवश्यकता होती है। उत्पादकों को हाइड्रोपोनिक्स के तकनीकी पहलुओं से परिचित होना चाहिए, जिसमें पीएच संतुलन, पोषक तत्व निर्माण और सिस्टम रखरखाव शामिल है। उचित ज्ञान के बिना, फसल खराब होने का जोखिम अधिक है।

ऊर्जा का उपयोग

हाइड्रोपोनिक सिस्टम, विशेष रूप से इनडोर फ़ार्म में, कृत्रिम प्रकाश व्यवस्था और जलवायु नियंत्रण प्रणालियों पर निर्भर करते हैं, जो ऊर्जा-गहन हो सकते हैं। हालाँकि ऊर्जा-कुशल तकनीकें, जैसे कि एलईडी लाइट्स ने बिजली की खपत को कम कर दिया है, लेकिन हाइड्रोपोनिक्स की स्थिरता के लिए ऊर्जा का उपयोग चिंता का विषय बना हुआ है, खासकर उन क्षेत्रों में जहाँ बिजली की लागत अधिक है।

जलजनित रोग

जबकि हाइड्रोपोनिक्स मिट्टी से होने वाली बीमारियों को खत्म करता है, यह जलजनित रोगजनकों, जैसे कि पाइथियम (जड़ सड़न) के जोखिम को पेश करता है। एक पुनरावर्ती प्रणाली में, यदि ठीक से नियंत्रित नहीं किया जाता है, तो रोग तेज़ी से फैल सकते हैं। रोग के प्रकोप को रोकने के लिए नियमित रूप से सिस्टम की सफाई, नसबंदी और निगरानी आवश्यक है।

हाइड्रोपोनिक्स के अनुप्रयोग

हाइड्रोपोनिक्स ने खाद्य उत्पादन से लेकर बागवानी और उससे आगे तक कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में अनुप्रयोग पाए हैं।

शहरी कृषि

घनी आबादी वाले शहरी क्षेत्रों में, हाइड्रोपोनिक्स कृषि योग्य भूमि की कमी का समाधान प्रदान करता है। शहरी खेत, जो अक्सर छतों पर, गोदामों में या शिपिंग कंटेनरों के अंदर स्थित होते हैं, उपभोक्ताओं के करीब ताजा उपज उगाने के लिए हाइड्रोपोनिक सिस्टम का उपयोग करते हैं। इससे परिवहन की आवश्यकता कम हो जाती है और स्थानीय रूप से उगाए गए, ताजे भोजन तक पहुँच सुनिश्चित होती है।

ग्रीनहाउस फसल उत्पादन

हाइड्रोपोनिक फसल उत्पादन के लिए ग्रीनहाउस का व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है, जिससे उत्पादकों को प्राकृतिक सूर्य के

ISSN: 3049-2211

प्रकाश का लाभ उठाते हुए पर्यावरण की स्थितियों को नियंत्रित करने की अनुमति मिलती है। हाइड्रोपोनिक ग्रीनहाउस विशेष रूप से टमाटर, खीरे और मिर्च जैसी उच्च-मूल्य वाली फसलों को उगाने के लिए आम हैं। यह विधि लगातार उत्पादन और उच्च-गुणवत्ता वाली पैदावार सुनिश्चित करती है, यहाँ तक कि चरम मौसम की स्थिति वाले क्षेत्रों में भी।

वर्टिकल फ़ार्मिंग

वर्टिकल फ़ार्मिंग, हाइड्रोपोनिक्स का एक उपसमूह है, जिसमें पौधों को लंबवत रूप से स्टैक्ड परतों में उगाया जाता है, अक्सर नियंत्रित इनडोर वातावरण में। यह तकनीक अंतरिक्ष के उपयोग को अधिकतम करती है और पत्तेदार साग, जड़ी-बूटियाँ और स्ट्रॉबेरी जैसी फसलों के बड़े पैमाने पर उत्पादन को सक्षम बनाती है। शहरों और शहरी केंद्रों में वर्टिकल फ़ार्मिंग का चलन बढ़ रहा है, जहाँ जगह सीमित है और खाद्य माँग अधिक है।

बागवानी और सजावटी पौधे

हाइड्रोपोनिक्स खाद्य फसलों तक सीमित नहीं है; इसका उपयोग सजावटी पौधों और फूलों की खेती के लिए भी किया जाता है। नर्सरी और व्यावसायिक उत्पादक पौधों को अधिक कुशलता से फैलाने के लिए हाइड्रोपोनिक सिस्टम का उपयोग करते हैं, जिससे बाज़ार में आने का समय कम हो जाता है और स्वस्थ, रोग-मुक्त पौधे सुनिश्चित होते हैं।

अनुसंधान और शिक्षा

हाइड्रोपोनिक्स कृषि अनुसंधान और शिक्षा में एक महत्वपूर्ण उपकरण है। विश्वविद्यालय और अनुसंधान संस्थान पौधों की शारीरिकी, पोषक तत्वों के अवशोषण और पौधों की वृद्धि पर पर्यावरणीय कारकों के प्रभावों का अध्ययन करने के लिए हाइड्रोपोनिक सिस्टम का उपयोग करते हैं। हाइड्रोपोनिक्स छात्रों को पादप जीव विज्ञान और संधारणीय कृषि के बारे में पढ़ाने का एक सुलभ तरीका भी प्रदान करता है।

हाइड्रोपोनिक्स की भविष्य की संभावनाएँ

हाइड्रोपोनिक्स का भविष्य उज्ज्वल है, प्रौद्योगिकी में प्रगति और संधारणीय कृषि की बढ़ती माँग उद्योग को आगे बढ़ा रही है। कई रुझान हाइड्रोपोनिक खेती के भविष्य को आकार दे रहे हैं:

स्वचालन और AI एकीकरण

स्वचालन और कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) दक्षता में सुधार, श्रम लागत को कम करने और बढ़ती परिस्थितियों को अनुकूलित करके हाइड्रोपोनिक खेती को बदल रहे हैं। AI-संचालित सेंसर और निगरानी प्रणाली पोषक तत्वों के स्तर, पानी की गुणवत्ता और पौधों के स्वास्थ्य पर वास्तविक समय का डेटा प्रदान कर सकते हैं, जिससे उत्पादकों को सूचित निर्णय लेने में मदद मिलती है। वाणिज्यिक हाइड्रोपोनिक खेतों में सिंचाई, प्रकाश व्यवस्था और कटाई के लिए स्वचालित प्रणालियाँ भी आम होती जा रही हैं।

संधारणीय प्रथाएँ

जैसे-जैसे जलवायु परिवर्तन और संसाधनों की कमी के बारे में चिंताएँ बढ़ती जा रही हैं, हाइड्रोपोनिक खेती को इसकी संधारणीयता के

ISSN: 3049-2211

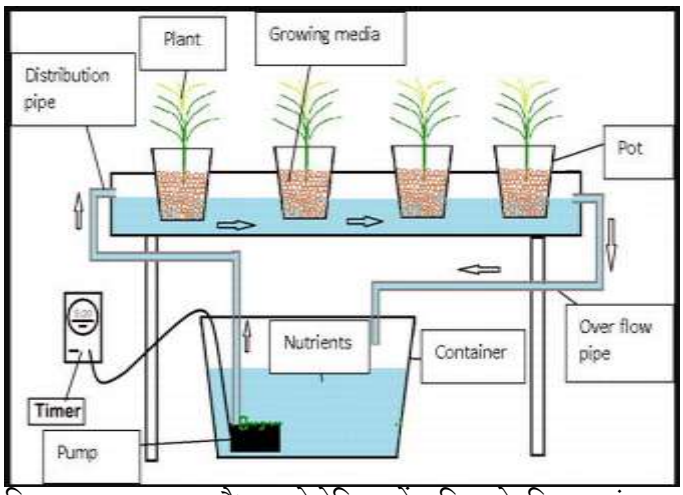

लिए पहचाना जा रहा है। हाइड्रोपोनिक्स में भविष्य के विकास संभवतः ऊर्जा के उपयोग को कम करने, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों को एकीकृत करने और पानी और पोषक तत्वों को पुनर्चक्रित करने पर ध्यान केंद्रित करेंगे। सौर ऊर्जा से चलने वाले हाइड्रोपोनिक सिस्टम और क्लोज्ड-लूप पोषक तत्व पुनर्चक्रण जैसे नवाचार अधिक पर्यावरण-अनुकूल खेती प्रथाओं का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

विकासशील क्षेत्रों में विस्तार

हाइड्रोपोनिक्स में विकासशील क्षेत्रों में कृषि में क्रांति लाने की क्षमता है, जहाँ मिट्टी का क्षरण, पानी की कमी और खराब बुनियादी ढाँचा फसल उत्पादन को सीमित करता है। अंतर्राष्ट्रीय संगठन और गैर सरकारी संगठन खाद्य सुरक्षा चुनौतियों के समाधान के रूप में हाइड्रोपोनिक्स को तेज़ी से बढ़ावा दे रहे हैं। उचित निवेश और प्रशिक्षण के साथ, हाइड्रोपोनिक्स उन क्षेत्रों में ताज़ा भोजन का एक विश्वसनीय स्रोत प्रदान कर सकता है जहाँ पारंपरिक खेती संभव नहीं है।

स्थानीय और ताज़ी उपज के लिए उपभोक्ता की माँग

स्थानीय रूप से उगाए गए, ताज़े उत्पादों की माँग हाइड्रोपोनिक खेती के विस्तार को बढ़ावा दे रही है, खासकर शहरी क्षेत्रों में। उपभोक्ता इस बात के प्रति अधिक जागरूक हो रहे हैं कि उनका भोजन कहाँ से आता है और वे टिकाऊ, कीटनाशक-मुक्त विकल्पों की तलाश कर रहे हैं। हाइड्रोपोनिक्स शहरी केंद्रों में ताज़े, पौष्टिक भोजन की माँग को पूरा करते हुए, उच्च गुणवत्ता वाले फलों और सब्जियों के साल भर उत्पादन की अनुमति देता है।

निष्कर्ष

हाइड्रोपोनिक्स हमारे भोजन उगाने के तरीके में एक महत्वपूर्ण बदलाव का प्रतिनिधित्व करता है, जो पारंपरिक मिट्टी-आधारित कृषि के लिए एक टिकाऊ और कुशल विकल्प प्रदान करता है। संसाधनों के उपयोग को अनुकूलित करके, फसल की पैदावार बढ़ाकर और पर्यावरणीय प्रभाव को कम करके, हाइड्रोपोनिक्स वैश्विक खाद्य उत्पादन के भविष्य में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए तैयार है।

जैसे-जैसे तकनीक आगे बढ़ती रहेगी, हाइड्रोपोनिक्स और भी अधिक सुलभ और कुशल होता जाएगा, जिससे यह शहरी कृषि, ऊर्ध्वाधर खेती और टिकाऊ खाद्य प्रणालियों का एक प्रमुख घटक बन जाएगा। हालाँकि उच्च प्रारंभिक लागत और ऊर्जा उपयोग जैसी चुनौतियाँ बनी हुई हैं, लेकिन खाद्य सुरक्षा, जल संरक्षण और जलवायु परिवर्तन को संबोधित करने में हाइड्रोपोनिक्स के संभावित लाभ इसे कृषि के भविष्य के लिए एक आशाजनक समाधान बनाते हैं।

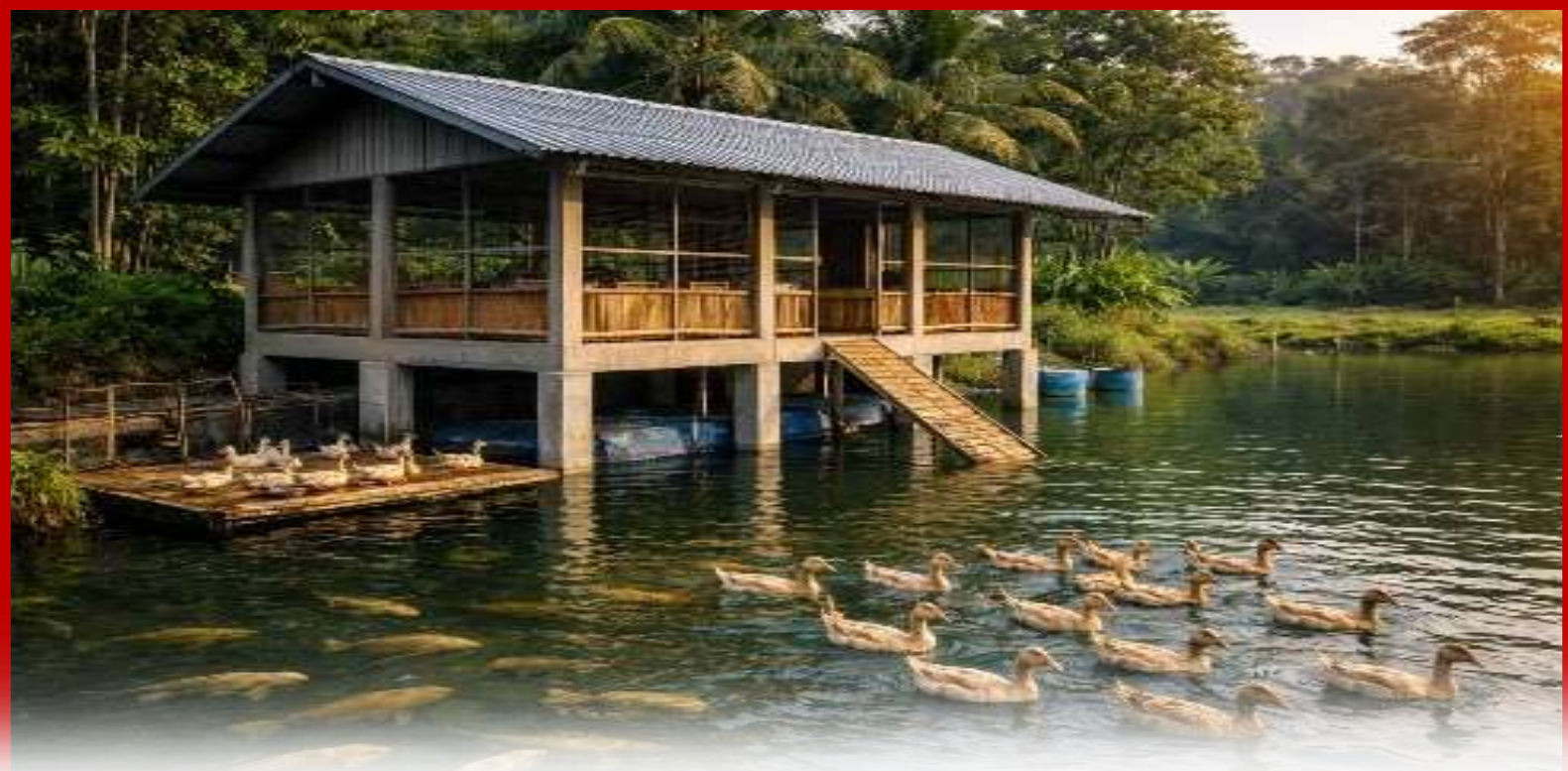

मछली-सह-बतख पालन
नील-हरित अर्थव्यवस्था का स्वदेशी मॉडल

डॉ. अवधेश कुमार सिंह*- विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि प्रसार), कृषि विज्ञान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश
अमित कुमार सिंह- एस.आर.एफ. - एन.आई.सी.आर.ए., भा.कृ.अनु.प. - एन.आई.एस.एस.टी., कृषि विज्ञान केन्द्र, भदोही, उत्तर प्रदेश
आशुतोष श्रीवास्तव- विषय वस्तु विशेषज्ञ (कृषि प्रसार), कृषि विज्ञान केन्द्र, प्रतापगढ़, उत्तर प्रदेश

भारत जैसे विकासशील देश में कृषि, पशुपालन एवं मत्स्य पालन ग्रामीण आजीविका के प्रमुख आधार रहे हैं। परंतु वर्तमान समय में बढ़ती जनसंख्या, भूमि जोत का निरंतर कम होना, उत्पादन लागत में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन तथा कृषि से अपेक्षित लाभ न मिल पाने के कारण ग्रामीण अर्थव्यवस्था गंभीर चुनौतियों का सामना कर रही है। विशेषकर छोटे एवं सीमांत किसानो के लिए पारंपरिक खेती अब पर्याप्त आय का साधन नहीं रह गई है। परिणामस्वरूप ग्रामीण युवाओं का कृषि से मोहभंग तथा पलायन एक गंभीर सामाजिक-आर्थिक समस्या बन चुका है। ऐसी परिस्थितियों में कृषि क्षेत्र में एकीकृत कृषि प्रणाली एक व्यवहारिक, टिकाऊ एवं लाभप्रद विकल्प के रूप में उभर कर सामने आई है। एकीकृत कृषि प्रणाली का मूल उद्देश्य उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम एवं संतुलित उपयोग करते हुए विविध उत्पादन घटकों को आपस में जोड़ना है, ताकि एक घटक का अपशिष्ट दूसरे घटक के लिए संसाधन बन सके। इसी सिद्धांत पर आधारित मछली-सह-बतख पालन एक अत्यंत वैज्ञानिक, पर्यावरण-अनुकूल एवं आर्थिक रूप से लाभकारी मॉडल है। मछली-सह-बतख पालन प्रणाली में तालाब को केवल जलसंग्रहण संरचना न मानकर एक जीवंत जैव पारिस्थितिकी तंत्र के रूप में विकसित

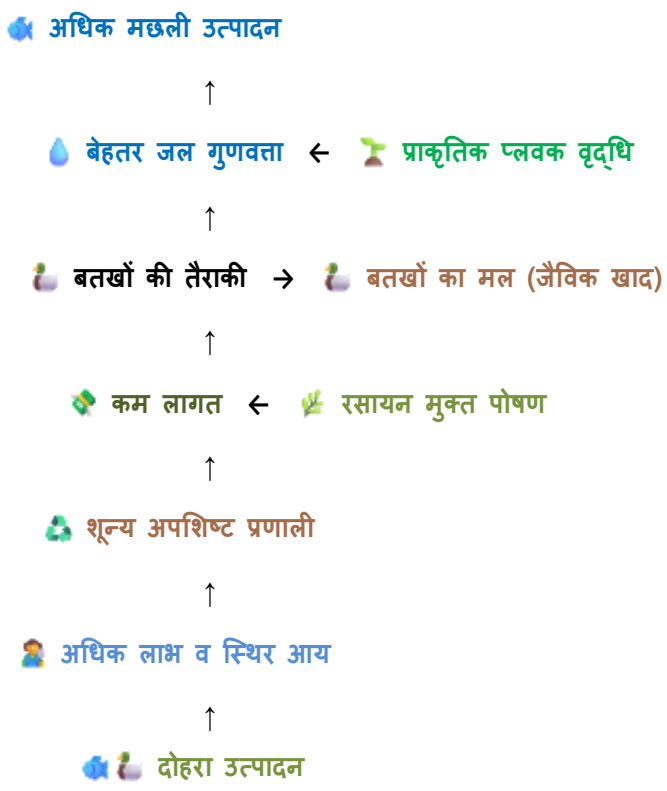

ISSN: 3049-2211

किया जाता है। इसमें बतखें तालाब में स्वाभाविक रूप से विचरण करती हैं, जल में उपलब्ध कीड़े मकोड़े, टेडपोल, घोंघे एवं जलीय वनस्पतियों का उपभोग करती हैं तथा अपनी विष्ठा तालाब में छोड़ती हैं। बतखों की विष्ठा में उपस्थित नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं अन्य पोषक तत्व तालाब में प्लवक की वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं, जो मछलियों का मुख्य प्राकृतिक आहार होता है। इस प्रकार मछलियों के लिए अतिरिक्त कृत्रिम आहार अथवा रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता नगण्य हो जाती है। यह प्रणाली प्रोटीन उत्पादन (मछली, अंडा एवं मांस) को एक ही जलक्षेत्र से सुनिश्चित करती है तथा मछलीपालन की कुल लागत में 40 से 60 प्रतिशत तक की कमी लाती है। सीमांत, छोटे एवं मध्यम कृषकों के लिए यह मॉडल विशेष रूप से उपयोगी है, क्योंकि इसमें पूंजी निवेश अपेक्षाकृत कम है, उत्पादन जोखिम विभाजित होता है तथा आय के बहुविध स्रोत उपलब्ध होते हैं।

बतख–सह–मछली पालन की अवधारणा

बतख-सह-मछली पालन का मूल सिद्धांत यह है कि बतख और मछली एक-दूसरे के लिए पूरक का कार्य करते हैं। बतख तालाब में तैरते हुए प्राकृतिक रूप से कीड़े-मकोड़े, घास और जलीय जीवों को खाती हैं। इस दौरान उनका मल सीधे तालाब के पानी में गिरता है, जो मछलियों के लिए जैविक खाद का कार्य करता है। बतख के मल से तालाब में पादप प्लवक और जंतु प्लवक की वृद्धि होती है, जो मछलियों का प्राकृतिक भोजन है। इस प्रकार मछलियों को अतिरिक्त खाद या रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम पड़ती है। यही कारण है कि यह प्रणाली कम लागत और अधिक लाभ देने वाली मानी जाती है। इसलिए, आज के समय में किसानों को ऐसी कृषि प्रणाली की आवश्यकता है जिसमें जोखिम कम हो और आय के स्रोत विविध हों। बतख–सह–मछली पालन न केवल आय बढ़ाने में सहायक है, बल्कि यह पोषण सुरक्षा, रोजगार सृजन और पर्यावरण संरक्षण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में तालाबों और जलभराव वाली भूमि का समुचित उपयोग इस प्रणाली के माध्यम से किया जा सकता है। इसके अलावा यह प्रणाली महिलाओं, युवाओं और स्वयं सहायता समूहों के लिए भी रोजगार का एक सशक्त साधन है।

तालाब का चयन एवं तैयारी

मछली-सह-बतख पालन हेतु बारहमासी तालाब का चयन किया जाता है, जिसकी गहराई कम से कम 1.5 मीटर से 2 मीटर होना चाहिए। इस प्रकार के तालाब कम से कम 0.5 हेक्टर तक के हो सकते हैं। अधिकतम 2 हेक्टेयर तक के तालाब इस कार्य हेतु उपयुक्त होते हैं। मछली सह बतख पालन हेतु निम्न तरीके से तालाब की तैयारी करते हैं:-

1. तालाब में पाई जाने वाली जलीय वनस्पतियों का उन्मूलन:

तालाब में पाई जाने वाली जलीय वनस्पतियों को निकाल देना आवश्यक होता है। जलीय वनस्पतियाँ मछलियों के मुक्त विचरण तथा जाल संचालन में बाधा उत्पन्न करती हैं। इसके अतिरिक्त ये मछलियों के शत्रुओं को आश्रय प्रदान करती हैं, घुलनशील ऑक्सीजन के संतुलन को प्रभावित करती हैं तथा तालाब में उपलब्ध पोषक तत्वों का अत्यधिक शोषण करती हैं, जिससे मछली उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। जलीय वनस्पतियों को यांत्रिक विधि द्वारा मशीन की सहायता से अथवा श्रमिकों द्वारा हाथ से निकलवाया जा सकता है। रासायनिक विधि में 2,4-डी, अमोनिया आदि रसायनों का प्रयोग कर जलीय वनस्पतियों की सफाई की जाती है। जैविक विधि के अंतर्गत ग्रास कार्प मछली जलीय वनस्पतियों को अपने भोजन के रूप में ग्रहण करती है, अतः तालाब में ग्रास कार्प के संचयन से जलीय वनस्पतियों का प्रभावी उन्मूलन हो जाता है।

2. मांसाहारी एवं अवांछित मछलियों का उन्मूलन

तालाब में उपस्थित मांसाहारी तथा अवांछित मछलियाँ पालन योग्य मछलियों के लिए हानिकारक होती हैं। इनके उन्मूलन के लिए तालाब में बार-बार जाल चलाकर इन्हें निकाल देना चाहिए। यदि इस विधि से सभी अवांछित मछलियों को निकालना संभव न हो, तो रासायनिक अथवा जैविक पदार्थों का प्रयोग किया जाता है। इसके अंतर्गत महुआ खली का प्रयोग 2000–2500 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ब्लीचिंग पाउडर का प्रयोग 200–250 पी.पी.एम. की दर से करने पर भी मांसाहारी एवं अवांछित मछलियों का उन्मूलन किया जा सकता है। इन सभी विधियों में महुआ खली का प्रयोग सर्वाधिक सुरक्षित एवं प्रभावी माना जाता है।

3. चूने का प्रयोग

तालाब में चूने का प्रयोग अत्यंत आवश्यक है। चूना जल में कैल्शियम की उपलब्धता बढ़ाने के साथ-साथ जल की बढ़ी हुई अम्लीयता को नियंत्रित करता है। यह हानिकारक धातुओं को अवक्षेपित करने, विभिन्न परजीवियों के प्रभाव से मछलियों को मुक्त रखने तथा तालाब में घुलनशील ऑक्सीजन के स्तर को बढ़ाने में सहायक होता है। सामान्यतः तालाब में 250 से 350 किलोग्राम चूना प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग किया जाना चाहिए। चूने का नियमित एवं संतुलित प्रयोग तालाब की उत्पादकता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

ISSN: 3049-2211

मछली की उपयुक्त मात्रा एवं प्रजातियाँ

क्रम	प्रजाति	प्रतिशत (%)	रहने का स्थान	आहार	मुख्य विशेषता
1	कतला	15	ऊपरी सतह	जूप्लैंकटन, सूक्ष्म जीव, प्राकृतिक प्लवक	तेज वृद्धि, बड़ा आकार
2	रोहू	30	मध्य सतह	शैवाल, फाइटोप्लैंकटन, डक-ड्रॉपिंग से बने सूक्ष्म जीव	तेजी से बढ़ने वाली, अधिक मांग
3	मृगल	20	निचली सतह	तालाब की गाद, जैविक कण, अवशेष	तालाब की सफाई में सहायक
4	सिल्वर कार्प	15	ऊपरी सतह	फाइटोप्लैंकटन, शैवाल	प्राकृतिक भोजन का अच्छा उपयोग
5	ग्रास कार्प	10	मध्य सतह	हरी घास, जलकुंभी, नेपियर घास	खरपतवार नियंत्रण
6	कॉमन कार्प	10	निचली सतह	सड़ा-गला जैविक पदार्थ, दाने	जल्दी प्रजनन, मजबूत प्रजाति

एक एकड़ तालाब में औसतन 4000 अंगुलिका छोड़ी जाती हैं। मछली बीज स्वस्थ, रोगमुक्त और समान आकार का होना चाहिए। सही मात्रा में मछली बीज छोड़ने से उत्पादन क्षमता बढ़ती है और मृत्यु दर कम होती है। बतख-सह-मत्स्य पालन में छः तरीको की मछलियों का विवरण निम्न है :-

बतख की उपयुक्त नस्लें एवं उनकी संख्या:

बतख-सह-मछली पालन के लिए बतख की नस्लों का चयन अत्यंत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि सही नस्ल से अंडा एवं मांस उत्पादन अधिक होता है और पालन लागत कम रहती है। इस एकीकृत प्रणाली के लिए मुख्य रूप से खाकी कैम्पबेल, इंडियन रनर और व्हाइट पेकिंग नस्लें उपयुक्त मानी जाती हैं। खाकी कैम्पबेल नस्ल अंडा उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है, जो अनुकूल प्रबंधन में प्रति वर्ष लगभग 250–300 अंडे देती है तथा कम आहार में भी अच्छा उत्पादन करती है। इंडियन रनर बतख भी उत्कृष्ट अंडा उत्पादक नस्ल है, यह सक्रिय स्वभाव की होती है और तालाब में प्राकृतिक भोजन जैसे कीट-पतंग, घोंघे व जलीय जीवों को आसानी से खोज लेती है, जिससे आहार लागत घटती है। वहीं व्हाइट पेकिंग नस्ल मुख्य रूप से मांस उत्पादन के लिए उपयुक्त है, इसकी वृद्धि दर तेज होती है और यह कम समय में बाजार योग्य वजन प्राप्त कर लेती है। ये सभी नस्लें जलाशय के वातावरण में आसानी से अनुकूलित हो जाती हैं, रोग प्रतिरोधक क्षमता अच्छी होती है तथा बतख-सह-मछली पालन प्रणाली में तालाब की उर्वरता बढ़ाकर मछली उत्पादन में भी सहायक सिद्ध होती हैं। एक एकड़ तालाब के लिए

ISSN: 3049-2211

100 से 120 बतख पर्याप्त मानी जाती हैं। सामान्यतः 110 बतख प्रति एकड़ का अनुपात सबसे उपयुक्त होता है। इससे तालाब में पोषक तत्वों का संतुलन बना रहता है और जल प्रदूषण की समस्या नहीं आती। यदि बतखों की संख्या अधिक हो जाए तो तालाब में अमोनिया की मात्रा बढ़ सकती है, जिससे मछलियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

बतख के लिए आवास व्यवस्था :

बतखों के लिए तालाब के किनारे या तालाब के ऊपर बाँस, लकड़ी या लोहे की सहायता से शेड बनाया जाता है। शेड सूखा, हवादार और सुरक्षित होना चाहिए। वर्षा और ठंड से बचाव की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। एक बतख के लिए लगभग 3 से 4 वर्गफुट स्थान पर्याप्त होता है। शेड में साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखना आवश्यक है।

क्रम	आवास का प्रकार	संरचना एवं स्थान	उपयुक्त स्थिति	प्रमुख लाभ
1	तालाब के किनारे आवास	तालाब के किनारे शेड, ठोस/कच्चा फर्श	छोटे व मध्यम किसान	प्रबंधन आसान, कम लागत
2	तालाब के ऊपर आवास	बाँस/लकड़ी का जालीदार शेड, पानी के ऊपर	बतख-सह-मछली पालन हेतु सर्वोत्तम	मल सीधे तालाब में ⟶ प्राकृतिक मछली आहार
3	अर्ध-गहन आवास प्रणाली	रात में शेड, दिन में तालाब	ग्रामीण क्षेत्र	संतुलित उत्पादन, कम रोग
4	चलायमान आवास	हल्का, स्थानांतरित होने योग्य शेड	छोटे तालाब, मौसमी पालन	लचीलापन, कम निर्माण लागत

भोजन की व्यवस्था (बतख + मछली)

बतख-सह-मछली पालन में भोजन (आहार) की व्यवस्था इस प्रणाली की सफलता का मूल आधार है। इस एकीकृत प्रणाली में बतख और मछलियाँ एक दूसरे के लिए पूरक आहार का कार्य करती हैं। बतख दिन में तालाब में छोड़ी जाती हैं, जहाँ वे प्राकृतिक रूप से कीट-पतंगे, घोंघे, जलीय कीड़े, शैवाल और अन्य सूक्ष्म जीवों को खाती हैं। इस प्राकृतिक आहार से बतख की जीवनावश्यकता का लगभग 40–50% पोषण पूरा होता है, जिससे उनकी आहार लागत कम रहती है। इसके अलावा, बेहतर अंडा एवं मांस उत्पादन के लिए बतखों को पूरक आहार दिया जाता है। इसमें प्रमुख रूप से चावल की टूटन, गेहूँ का चोकर, मक्का, सोयाबीन/सरसों खली शामिल होती है। इसके साथ ही हरा चारा जैसे नेपियर घास, हरी दूब या जलकुंभी भी दिया जाता है। औसतन एक वयस्क बतख को प्रतिदिन 120–150 ग्राम मिश्रित आहार और 30–50 ग्राम हरा चारा पर्याप्त होता है। यदि तालाब क्षेत्र 1 एकड़ का हो और बतख की संख्या 110 हो, तो प्रतिदिन लगभग 15-20 किलोग्राम मिश्रित आहार और 4-8 किलोग्राम हरा चारा आवश्यक होगा। मछलियों के

ISSN: 3049-2211

लिए भोजन की प्र मुख व्यवस्था प्राकृतिक भोजन और बतख के मल से उत्पन्न पोषक तत्व है। बतख का मल तालाब में गिरकर पादप प्लवक और जंतु प्लवक की वृद्धि करता है, जो मछली के लिए प्राकृतिक आहार का काम करता है। इस प्रक्रिया से मछलियों की आहार लागत में 30–40% की बचत होती है। आवश्यकता पड़ने पर मछलियों को पूरक आहार के रूप में चावल की भूसी + सरसों खली (1:1) की मात्रा दी जाती है, जो मछलियों के शरीर भार का लगभग 1–2% प्रतिदिन होती है। उदाहरण के लिए, यदि तालाब में मछली की कुल शरीर भार 3500 किलोग्राम है, तो प्रतिदिन लगभग 35–70 किलोग्राम पूरक आहार पर्याप्त होगा।

इस तरह, बतख-सह-मछली पालन में संतुलित और वैज्ञानिक आहार व्यवस्था के कारण:

- ❖ बतख और मछली दोनों का उत्पादन बढ़ता है,
- ❖ तालाब की उर्वरता बनी रहती है,
- ❖ अतिरिक्त खाद और रसायन की जरूरत नहीं होती,
- ❖ कुल आहार लागत में 30–40% की कमी आती है

स्वास्थ्य प्रबंधन (बतख + मछली):

बतखों में डक प्लेग, डक कॉलरा और एवियन इन्फ्लुएंजा जैसी बीमारियाँ पाई जाती हैं। समय पर टीकाकरण और स्वच्छता से इन रोगों से बचाव संभव है। साफ पानी, संतुलित आहार और भीड़ से बचाव बतखों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है।

मछलियों के स्वास्थ्य के लिए तालाब के पानी की गुणवत्ता बनाए रखना आवश्यक है। ऑक्सीजन की कमी, अमोनिया की अधिकता, अत्यधिक गंदगी और अचानक तापमान परिवर्तन से मछलियों में रोग हो सकते हैं। समय-समय पर चूना डालना और पानी की आंशिक अदला-बदली करना लाभकारी होता है।

तालिका: 1. एकीकृत मछली-सह-बतख पालन का आर्थिक विश्लेषण (1 एकड़ तालाब)

वर्ग	घटक / विवरण	मानक आँकड़ा / मात्रा	राशि (₹)
A. मानक पैमाना	तालाब का क्षेत्रफल	1 एकड़	—
	बतखों की संख्या	110	—
	उपयुक्त नस्ल	खाकी कैम्पबेल	—
	पालन अवधि	12 माह	—
B. प्रारम्भिक लागत	तालाब सफाई, मरम्मत, चूना	—	12,000
	बतख आवास (शेड + प्लेटफार्म)	—	20,000
	मछली बीज (अंगुलिका)	4,000	8,000
	बतख चूजे	110	7,700
	जाल, बर्तन, उपकरण	—	4,000
	कुल प्रारम्भिक लागत (B1)		**51,700**
C. वार्षिक परिचालन लागत	बतख दाना / पूरक आहार	—	25,000
	बतख दवा व टीकाकरण	—	2,500
	श्रम (आंशिक / पारिवारिक)	—	8,000
	मछली पूरक आहार	—	12,000
	खाद, चूना, जल प्रबंधन	—	6,000
	कुल परिचालन लागत (C1)		**53,500**
D. कुल लागत (पहला वर्ष)	**B1 + C1**		**1,05,200**
E. वार्षिक उत्पादन	मछली उत्पादन	1,200–1,400 किग्रा (औसत 1,300)	—
	अंडा उत्पादन	19,000 अंडे/वर्ष	—
	पुरानी बतख	90	—
F. वार्षिक आय	मछली बिक्री	1,300 किग्रा × ₹120	1,56,000

	अंडा बिक्री	19,000 × ₹8	1,52,000
	पुरानी बतख बिक्री	90 × ₹250	22,500
	कुल वार्षिक आय (F1)		**3,30,500**
शुद्ध लाभ (F1 − D) 3,30,500 - 1,05,200 = 2,25,300 ₹ / वर्ष			
लाभ–लागत अनुपात (B:C) 3.14 : 1			
आर्थिक अर्थ 1 ₹ निवेश ⟶ 3.14 ₹ प्राप्ति			

निष्कर्ष:

मछली-सह-बतख पालन एक ऐसी उन्नत तकनीक है जिसमें जल संसाधनों का दोहरे उद्देश्य के लिए उपयोग किया जाता है। इस प्रणाली का मुख्य आधार 'पारस्परिक पूरकता' है, जहाँ बतख और मछली एक दूसरे के विकास में सहायक होते हैं। इस पद्धति में तालाब के ऊपर या किनारे पर बतखों के लिए घर बनाया जाता है। बतखें दिन भर तालाब के पानी में तैरती हैं, जिससे पानी में हलचल बनी रहती है और वायुमंडलीय ऑक्सीजन पानी में अधिक मात्रा में घुलती है, जो मछलियों के तेजी से विकास के लिए अनिवार्य है। इसके अलावा, बतख का मल सीधे तालाब में गिरकर एक उत्कृष्ट जैविक उर्वरक का कार्य करता है, जिससे पानी में प्राकृतिक भोजन जैसे प्लवक की प्रचुरता हो जाती है। इससे किसानों को मछलियों के लिए कृत्रिम आहार पर होने वाले खर्च में भारी बचत होती है। आर्थिक दृष्टि से यह मॉडल अत्यंत लाभकारी है क्योंकि यह कम लागत में अंडे, मांस और मछली के रूप में बहुआयामी आय प्रदान करता है। बतखें तालाब के हानिकारक कीटों, घोंघों और खरपतवारों को खाकर तालाब के पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित रखती हैं, जिससे मछलियों में बीमारियों का खतरा कम हो जाता है। एक एकड़ के तालाब में लगभग 100 से 120 बतखों का पालन किया जा सकता है, जो साल भर में इतनी खाद पैदा कर देती हैं कि अलग से रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता नहीं पड़ती। सामान्यतः इस प्रणाली में कतला, रोहू और मृगल जैसी मछलियों का पालन 'खाकी कैंपबेल' जैसी बतख की नस्लों के साथ किया जाता है। यह एकीकृत खेती न केवल संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग सुनिश्चित करती है, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूती प्रदान करते हुए किसानों की शुद्ध आय में 50-60% तक की वृद्धि करने की क्षमता रखती है।

गुड़ के स्वास्थ्य लाभ

डॉ. इला तिवारी: सहायक प्राध्यापक, श्री लाल बहादुर शास्त्री डिग्री कॉलेज, गोंडा
डॉ. कुलभूषण मणि तिवारी: सस्य विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश

गुड़ के कई स्वास्थ्य लाभ हैं। यह ऊर्जा देता है, पाचन में सुधार करता है, और आयरन की कमी को दूर करने में मदद करता है। यह सर्दी-जुकाम और एलर्जी के लक्षणों को भी कम कर सकता है। गुड़ में एंटीऑक्सीडेंट, विटामिन और खनिज भी होते हैं जो स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होते हैं।

गुड़ खाने के कुछ मुख्य फायदे-

- **ऊर्जा-** गुड़ में कार्बोहाइड्रेट की अच्छी मात्रा होती है, जो शरीर को तुरंत ऊर्जा प्रदान करती है।
- **पाचन-** गुड़ पाचन में सुधार करता है, गैस और अपच से राहत दिलाता है।
- **आयरन की कमी-** गुड़ आयरन का एक अच्छा स्रोत है, जो एनीमिया के जोखिम को कम करने में मदद करता है।
- **सर्दी-जुकाम-** गुड़ में मौजूद एंटी-इंफ्लेमेटरी गुण सर्दी-जुकाम और एलर्जी के लक्षणों को कम कर सकते हैं।
- **इम्युनिटी-** गुड़ एंटीऑक्सीडेंट और विटामिन सी का एक अच्छा स्रोत है, जो प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने में मदद करता है।
- **त्वचा-** गुड़ त्वचा को स्वस्थ रखने में मदद करता है, क्योंकि यह एक प्राकृतिक डिटॉक्सिफायर के रूप में कार्य करता है।
- **वजन घटाना-** गुड़ में फाइबर की मात्रा वजन घटाने में मदद कर सकती है।
- **हड्डियों के स्वास्थ्य-** गुड़ में कैल्शियम और फास्फोरस होता है, जो हड्डियों के स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हैं।

गुड़ का सेवन कैसे करें-

- सुबह खाली पेट गुड़ का पानी पीना फायदेमंद होता है।
- सर्दियों में गुड़ का काढ़ा पीने से शरीर को गर्मी मिलती है और सर्दी-जुकाम से बचाव होता है।
- पाचन के लिए भोजन के बाद एक टुकड़ा गुड़ खाने से पाचन में सुधार होता है।
- इम्युनिटी के लिए रोजाना एक टुकड़ा गुड़ खाने से प्रतिरक्षा प्रणाली मजबूत होती है।

गुड़ का सेवन करते समय ध्यान रखने योग्य बातें-

मात्रा- एक दिन में 10-15 ग्राम गुड़ से ज्यादा नहीं खाना चाहिए।

डायबिटीज- यदि आपको डायबिटीज है, तो गुड़ का सेवन करने से पहले अपने डॉक्टर से सलाह लें।

गर्मी- गर्मी के मौसम में गुड़ का सेवन सीमित करना चाहिए, क्योंकि यह शरीर को गर्म कर सकता है. गुड़ एक स्वस्थ और पौष्टिक खाद्य पदार्थ है, जिसे नियमित रूप से अपनी डाइट में शामिल किया जा सकता है।

गुड़, जिसे जग्गेरी भी कहा जाता है, पारंपरिक भारतीय मिठाई का एक प्रमुख घटक है। यह गन्ने के रस को उबालकर और फिर उसे ठंडा करके बनाया जाता है। इसका उपयोग सदियों से भारतीय उपमहाद्वीप में खाने की मिठास बढ़ाने के लिए होता आया है। गुड़ का ऐतिहासिक महत्व इसके पोषण संबंधी गुणों और आयुर्वेद में इसके उपयोग के कारण अधिक है। इसे एक प्राकृतिक स्वीटनर के रूप में माना जाता है जो कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है।

ISSN: 3049-2211

इस लेख में हम गुड़ खाने के विभिन्न फायदे और संभावित नुकसानों का विस्तार से अध्ययन करेंगे, साथ ही साथ इसे अपने आहार में किस प्रकार शामिल किया जा सकता है इस पर भी चर्चा करेंगे। आइए गुड़ के पोषण संबंधी लाभों पर नज़र डालें।

गुड़ की तासीर क्या है?

गुड़ की तासीर मध्यम होती है। यह शारीरिक उष्णता को बढ़ावा नहीं देता है और उसे ठंडक प्रदान करता है। इसलिए गुड़ को गर्मियों में भी सेवन किया जा सकता है। यह ताजगी और प्राकृतिक ऊर्जा का अच्छा स्रोत होता है।

क्या गुड़ वजन घटाने में मदद करता है?

हाँ, गुड़ मेटाबोलिज्म को बढ़ावा देकर और अधिक कैलोरी जलाने में मदद कर सकता है, जिससे वजन घटाने में सहायता मिल सकती है। फिर भी, गुड़ का सेवन संतुलित आहार और नियमित व्यायाम के साथ मिलकर किया जाना चाहिए।

क्या गुड़ खाने से डायबिटीज हो सकती है?

गुड़ में शुगर होता है, इसलिए अत्यधिक सेवन से ब्लड शुगर लेवल में वृद्धि हो सकती है, जिससे मधुमेह के जोखिम में वृद्धि हो सकती है। मधुमेह रोगी या उच्च जोखिम वाले व्यक्तियों को गुड़ का सेवन करते समय सावधानी बरतनी चाहिए और चिकित्सा सलाह लेनी चाहिए।

गुड़ के पोषण मूल्य

गुड़, एक पारंपरिक प्राकृतिक मीठाई है जो मुख्य रूप से अधिकतर गन्ने के रस का संकेन्द्रित रूप से बनाया जाता है, रिफाइंड चीनी के मुकाबले पोषक तत्वों में अधिक धनी होता है। यहां एक तालिका है जिसमें प्रति 100 ग्राम गुड़ के पोषण मूल्य का प्रतिनिधित्व किया गया है:

गुड़ के पोषण मूल्य की तालिका

ध्यान दें: गुड़ की यथार्थ पोषण सामग्री की अंतर्निहितता की सटीकता उसकी स्रोत और प्रसंस्करण पद्धति पर निर्भर करती है। गुड़ की ऊर्जा में मिनरल की अधिक मात्रा, विशेष रूप से लोह और मैग्नीशियम, के लिए प्रशंसा की जाती है, जिससे यह रिफाइंड चीनी के मुकाबले एक स्वस्थतर विकल्प है। हालांकि, यह कैलोरी में उच्च है और इसे नियमित रूप से सेवन किया जाना चाहिए, विशेष रूप से वे व्यक्ति जो अपनी चीनी की खपत का पर्यावरण देख रहे हैं या मधुमेह से पीड़ित हैं।

गुड़ खाने के फायदे

आइए गुड़ खाने के फायदों को विस्तार से समझते हैं, जिससे इसके पोषण संबंधी लाभ, पाचन में सुधार, रक्त शुद्धि, ऊर्जा स्रोत के रूप में इसकी भूमिका, और वजन प्रबंधन में इसके योगदान को बेहतर ढंग से समझा जा सके।

पोषण संबंधी लाभ

गुड़ एक प्राकृतिक स्वीटनर है जो गन्ने के रस से बनाया जाता है और इसमें विविध पोषक तत्वों का खजाना होता है। यह आयरन, मैग्नीशियम, पोटैशियम, और विटामिन बी कॉम्प्लेक्स सहित कई आवश्यक खनिजों का समृद्ध स्रोत है। आयरन से समृद्ध होने के कारण, गुड़ एनीमिया से लड़ने में मदद कर सकता है, खासकर महिलाओं में। मैग्नीशियम और पोटैशियम हृदय स्वास्थ्य और रक्तचाप को सुधारने में सहायक होते हैं।

पाचन में सुधार- गुड़ पाचन स्वास्थ्य को बढ़ावा देने में उल्लेखनीय रूप से सहायक है। इसका नियमित सेवन पाचन क्रिया को सक्रिय करने और आंतों में सुचारु गतिविधि को प्रोत्साहित कर सकता है, जिससे कब्ज, पेट फूलना, और गैस जैसी समस्याओं को कम किया जा सकता है।

रक्त शुद्धि- गुड़ के अद्वितीय गुणों में से एक है इसकी रक्त शुद्धिकरण क्षमता। यह शरीर से अशुद्धियों को बाहर निकालने में सहायक होता है, जिससे रक्त परिसंचरण में सुधार होता है। इसके अलावा, गुड़ लीवर को डिटॉक्सिफाई करने में भी मदद करता है।

ऊर्जा स्रोत- गुड़, रिफाइंड शुगर के विपरीत, एक स्थिर ऊर्जा स्रोत प्रदान करता है। यह शरीर द्वारा धीरे-धीरे अवशोषित होता है, जिससे ऊर्जा का स्तर स्थिर रहता है और शर्करा के सेवन के बाद आमतौर पर जो उतार-चढ़ाव होता है, वह कम होता है। यह एथलीटों और व्यायाम करने वालों के लिए उत्तम ऊर्जा स्रोत है।

वजन प्रबंधन- गुड़ मेटाबोलिज्म को बढ़ावा देने और शरीर की वसा जलने की क्षमता को सक्रिय करने में सहायक हो सकता है। यह वजन प्रबंधन के लिए एक अच्छा विकल्प है, क्योंकि यह न केवल वसा जलने की प्रक्रिया को सक्रिय करता है, बल्कि यह अतिरिक्त कैलोरी के सेवन को भी कम करने में मदद कर सकता है। गुड़ का नियमित उपयोग, विशेष रूप से चीनी के विकल्प के रूप में, वजन नियंत्रण और स्वस्थ जीवनशैली की ओर एक कदम हो सकता है। इसके मीठे स्वाद के बावजूद, गुड़ में उच्च फाइबर सामग्री होती है, जो भूख को नियंत्रित करने और लंबे समय तक संतृप्ति की भावना प्रदान कर सकती है।

गुड़ खाने के नुकसान

जबकि गुड़ के अनेक स्वास्थ्य लाभ हैं, इसके अत्यधिक सेवन से कुछ संभावित नुकसान भी हो सकते हैं। यहाँ पर हम गुड़ के सेवन से जुड़े कुछ संभावित नुकसानों पर विचार करेंगे।

ISSN: 3049-2211

अत्यधिक कैलोरी सेवन- गुड़ प्राकृतिक शुगर का एक स्रोत है, और जैसे ही यह स्वास्थ्यवर्धक है, इसमें काफी मात्रा में कैलोरी भी होती है। अत्यधिक सेवन से कैलोरी की मात्रा में वृद्धि हो सकती है, जिससे वजन बढ़ने का जोखिम बढ़ सकता है। संतुलित आहार के हिस्से के रूप में गुड़ का सेवन करना महत्वपूर्ण है, और इसे मिठास के लिए एक स्वस्थ विकल्प के रूप में मात्रा में सीमित रखना चाहिए।

ब्लड शुगर में वृद्धि- गुड़ में सामान्य शुगर की तुलना में कम ग्लाइसेमिक इंडेक्स होता है, लेकिन यह फिर भी ब्लड शुगर को प्रभावित कर सकता है। मधुमेह रोगियों को गुड़ का सेवन करते समय सावधानी बरतनी चाहिए, और इसे अपने डाइट प्लान में शामिल करने से पहले चिकित्सकीय सलाह लेनी चाहिए।

पाचन संबंधी समस्याएं- जब अधिकांश लोगों के लिए गुड़ पाचन में सहायक होता है, कुछ व्यक्तियों में इससे पेट में गैस, ब्लोटिंग, या दस्त जैसी पाचन संबंधी समस्याएं हो सकती हैं। यह विशेष रूप से उन व्यक्तियों में हो सकता है जो गुड़ के लिए संवेदनशील होते हैं या जिन्हें इससे एलर्जी हो।

एलर्जिक प्रतिक्रिया- कुछ दुर्लभ मामलों में, लोग गुड़ में मौजूद तत्वों के प्रति एलर्जिक प्रतिक्रिया विकसित कर सकते हैं। यह खुजली, चकत्ते या सांस लेने में कठिनाई जैसे लक्षणों का कारण बन सकता है। यदि आपको गुड़ खाने के बाद किसी भी प्रकार की एलर्जिक प्रतिक्रिया का अनुभव होता है, तो इसका सेवन तुरंत बंद कर देना चाहिए और चिकित्सकीय सलाह लेनी चाहिए।

दाँतों के स्वास्थ्य पर प्रभाव- गुड़ में शुगर की मात्रा होने के कारण, अगर इसे अधिक मात्रा में खाया जाए तो यह दाँतों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। शुगर का दाँतों पर अधिक संपर्क होने से दाँतों में कैविटीज और दंत क्षय की संभावना बढ़ जाती है। गुड़ की शुगर मौखिक बैक्टीरिया द्वारा फर्मेंट की जा सकती है, जिससे एसिड उत्पादन होता है जो दाँतों के इनेमल को क्षति पहुँचाता है। इसलिए, गुड़ का सेवन करने के बाद, दाँतों की अच्छी तरह से सफाई करना महत्वपूर्ण है ताकि शुगर के अवशेषों को हटाया जा सके और दाँतों की सुरक्षा की जा सके।

इस प्रकार, जबकि गुड़ कई स्वास्थ्य लाभ प्रदान करता है, इसके सेवन के साथ कुछ संभावित नुकसान भी जुड़े होते हैं। ये नुकसान अत्यधिक सेवन, मधुमेह रोगियों के लिए जोखिम, पाचन संबंधी समस्याएं, एलर्जिक प्रतिक्रिया, और दाँतों के स्वास्थ्य पर प्रभाव से संबंधित हैं। इसलिए, संतुलित मात्रा में गुड़ का सेवन करना और स्वस्थ जीवनशैली का पालन करना महत्वपूर्ण है। यदि आपको गुड़ के सेवन से संबंधित कोई भी समस्या अनुभव होती है, तो इसे आहार से हटाने और चिकित्सा सलाह लेने पर विचार करना चाहिए।

गुड़ का सेवन कैसे करें?

गुड़ का सेवन स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकता है, लेकिन इसे सही मात्रा में और उचित तरीके से करना जरूरी है। नीचे गुड़ का सेवन कैसे करें इस पर कुछ सुझाव दिए गए हैं।

सही मात्रा- स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि वयस्कों के लिए दिन में 10 से 15 ग्राम गुड़ का सेवन पर्याप्त होता है। यह मात्रा एक छोटे टुकड़े के बराबर होती है। हालांकि, यह मात्रा व्यक्ति की ऊर्जा की आवश्यकता, स्वास्थ्य स्थिति, और जीवनशैली पर निर्भर करती है। मधुमेह रोगियों और वजन कम करने की कोशिश कर रहे लोगों को विशेष रूप से सावधानी बरतनी चाहिए।

विभिन्न प्रकार के उपयोग

- **चाय और कॉफी में मिठास के रूप में:** चीनी की जगह गुड़ का इस्तेमाल करके आप अपनी चाय या कॉफी को स्वस्थ बना सकते हैं।
- **मिठाइयों में:** विभिन्न प्रकार की मिठाइयाँ और डेसर्ट्स बनाते समय चीनी के विकल्प के रूप में गुड़ का प्रयोग करें। इससे मिठाई में एक अनूठा स्वाद और पोषण मिलता है।
- **खाना पकाने में:** कई भारतीय व्यंजन और सॉसेज में गुड़ को मिठास और रिचनेस देने के लिए जोड़ा जाता है।
- **स्वास्थ्य पेय के रूप में:** गुड़ को पानी में घोलकर या नींबू पानी में मिलाकर एक स्वास्थ्यवर्धक पेय बनाया जा सकता है।

गुड़ का उपयोग करते समय, इसे अपने आहार में संतुलित रूप से शामिल करें और अतिरिक्त सेवन से बचें। स्वास्थ्य लाभों का आनंद लेने के लिए इसे विविध और संतुलित आहार का हिस्सा बनाएं।

निष्कर्ष

गुड़ के सेवन से जुड़े अनेक फायदे और कुछ संभावित नुकसान हैं। इसका सही मात्रा में सेवन करने पर यह स्वास्थ्य लाभ प्रदान कर सकता है, जैसे कि पाचन में सुधार, रक्त शुद्धि, ऊर्जा प्रदान करना, और वजन प्रबंधन में सहायता। हालांकि, इसका अत्यधिक सेवन मधुमेह के जोखिम, पाचन समस्याओं, और दाँतों के स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव जैसी समस्याओं को जन्म दे सकता है। स्वस्थ जीवनशैली और संतुलित आहार का हिस्सा बनाते हुए, मॉडरेशन में गुड़ का सेवन करना सर्वोत्तम है। इस प्रकार, गुड़ का सेवन संतुलित और जागरूक तरीके से करना चाहिए।

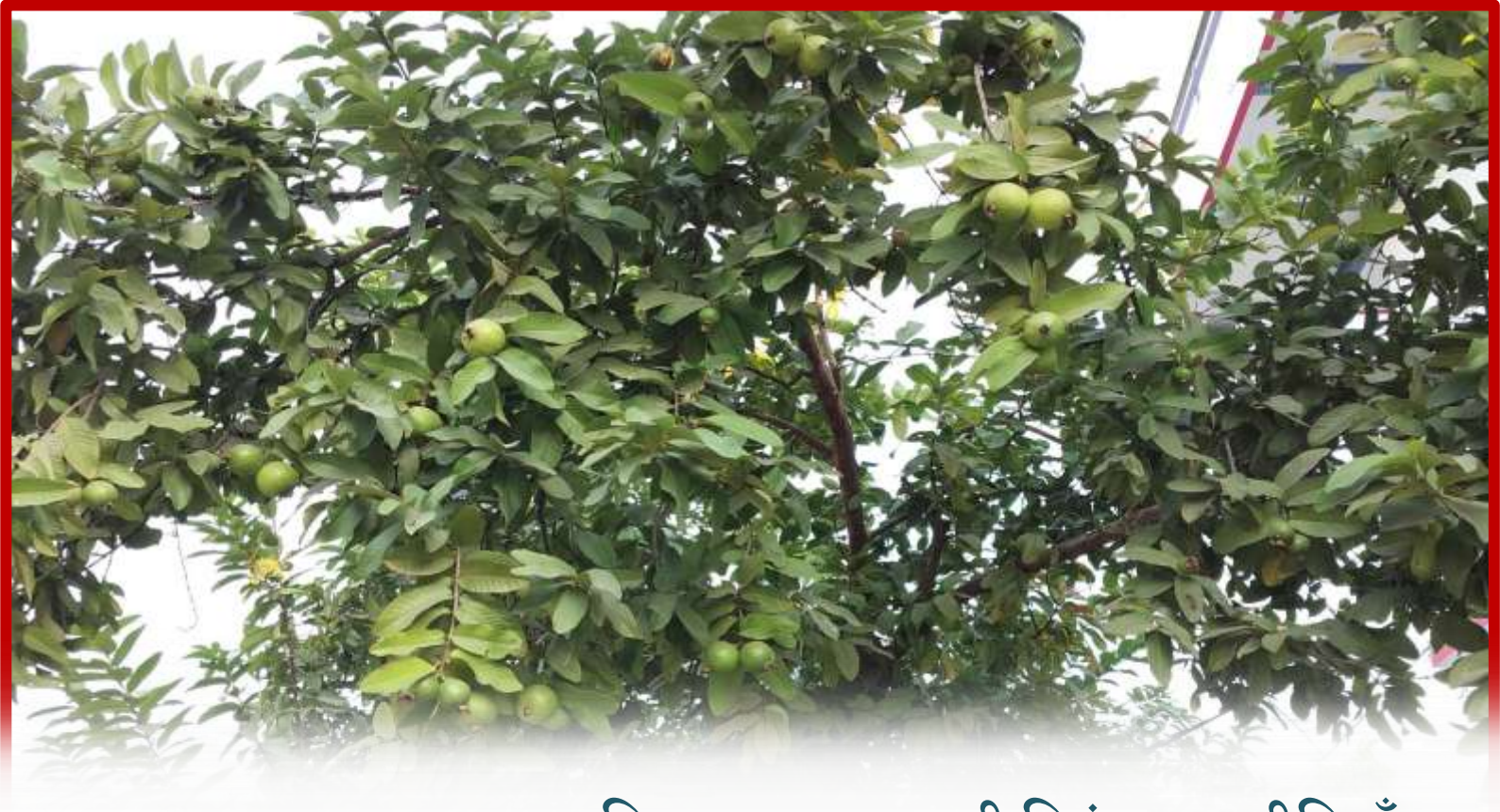

स्वस्थ अमरूद खुशहाल किसान: फल मक्खी नियंत्रण रणनीतियाँ

मो. जाकिर हुसैन, आवेश यादव एवं विकास कुमार

कीट विज्ञान विभाग

आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय कुमारगंज, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

भारत में फल मक्खी एक गंभीर कीट समस्या है जो किसानों को हर वर्ष करोड़ों रुपये का आर्थिक नुकसान पहुँचाती है। यह देश के लगभग आधे हिस्से में पाई जाती है और इसके हमले से आम अमरूद आड़ू नाशपाती खुमानी लीची तथा नींबू वर्गीय फलों को 10 से 80 प्रतिशत तक क्षति होती है। कई इलाकों में अमरूद और आम की फसलें 40&75 प्रतिशत तक प्रभावित पाई गई हैं। एक बार किसी क्षेत्र में स्थायित्व प्राप्त कर लेने के बाद यह कीट तेजी से फैलता है। इसका जीवनकाल छोटा होता है लेकिन अंडे देने की क्षमता बहुत अधिक होती है और प्रतिकूल मौसम में भी जीवित रहने की शक्ति रखता है। फल मक्खी का नियंत्रण कठिन है क्योंकि यह सीधे फलों के भीतर रहकर भोजन करती और विकसित होती है, साथ ही यह बहुभक्षी स्वभाव की होती है, यानी कई प्रकार के पौधों पर निर्भर रहती है।

हानि के लक्षण

फलमक्खी की सुंडियाँ फल के गूदे को भीतर से खाकर उसे टेढ़ा मेढ़ा और सड़ने योग्य बना देती हैं जिस पर बाद में कवक और जीवाणु आक्रमण कर दुर्गंध उत्पन्न करते हैं और अंततः उत्पादन में भारी गिरावट आती है।

जीवन चक्र

वयस्क फलमक्खी लाल-भूरे रंग की होती है जिसकी लंबाई 4-6 मि.मी. होती है। इसके पंख पारदर्शी और चमकदार होते हैं जिन पर पीले-भूरे रंग की धारियाँ होती हैं। मादा अपने शरीर के पिछले नुकीले भाग से फल के अंदर अंडे देती है। एक बार में 1-12 अंडे दिए जाते हैं। 1-3 दिन बाद अंडे से सुंडी निकलती है। सुंडी अवस्था लगभग 10-12 दिन रहती है। पूर्ण विकसित सुंडी फल से बाहर निकलकर मिट्टी में चली जाती है और प्यूपा अवस्था में प्रवेश करती है। प्यूपा अवस्था भी लगभग 10-12 दिन की होती है। बरसात के दिनों में जीवन चक्र केवल 2 सप्ताह में पूरा हो जाता है जबकि सर्दी के मौसम में 2-3 महीने लगते है फलमक्खी

का प्रबंधन तभी संभव है जब किसान सामूहिक रूप से प्रबंधन उपाय अपनाएँ।

प्रबंधन विधियाँ:

- कीटग्रस्त फलों को इकट्ठा कर खेत से बाहर ले जाकर गड्ढे में दबा दें।
- खरपतवार नष्ट करें क्योंकि ये कीटों के आश्रय स्थल होते हैं।
- ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें।
- फलों की बैगिंग (थैलियों से ढकना) करें।
- रसायनिक नियंत्रण हेतु –
  - 50 ग्राम गुड़ + 10 मि.ली. मैलाथियान 50 ईसी को 5 लीटर पानी में घोलकर 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।
  - निगरानी और नियंत्रण के लिए फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करें।
  - प्रति हेक्टेयर जाल ट्रैप अथवा प्रति पंक्ति 1 जाल ट्रैप लगाएँ।
  - ल्यूर (चारा सेप्टा) को गर्मी में 20-25 दिन और अन्य मौसम में 45 दिन बाद बदलना आवश्यक है।

निष्कर्ष:

भारत में फल मक्खी फलों की खेती के लिए एक गंभीर समस्या बन चुकी है जो न केवल उत्पादन को घटाती है बल्कि फलों की गुणवत्ता को भी प्रभावित करती है। इसकी तेज़ प्रजनन दर विभिन्न पौधों पर निर्भरता और प्रतिकूल मौसम में जीवित रहने की क्षमता इसे नियंत्रित करना चुनौतीपूर्ण बनाती है। अमरूद आम लीची जैसे प्रमुख फलों में इससे भारी नुकसान देखा गया है। इसका सफल प्रबंधन तभी संभव है जब किसान सामूहिक रूप से जैविक यांत्रिक और रासायनिक उपायों को अपनाएँ। प्रभावित फलों का उचित प्रबंधन गहरी जुताई फलों को थैलियों से ढकना फेरोमोन ट्रैप की स्थापना और कीटनाशकों का सही उपयोग जैसे उपाय अपना कर इस कीट की संख्या को कम किया जा सकता है। नियमित निगरानी और ट्रैप जाल का समय पर परिवर्तन विशेष रूप से प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

अतः प्रबन्धन रणनीति को अपनाकर फल मक्खी से होने वाले नुकसान को काफी हद तक रोका जा सकता है जिससे किसानों की आमदनी बढ़ेगी और फलों की गुणवत्ता में भी सुधार होगा।

***

एलोवेरा की बाजार में बढ़ती मांग

डॉ. इला तिवारी: सहायक प्राध्यापक, श्री लाल बहादुर शास्त्री डिग्री कॉलेज, गोंडा
डॉ. कुलभूषण मणि तिवारी: सस्य विज्ञान विभाग, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी, उत्तर प्रदेश

एलोवेरा एक रसीला पौधा है, जो अपने औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है। इसे हिंदी में 'घृतकुमारी' या 'ग्वार पाठा' भी कहते हैं. एलोवेरा की बाजार में बढ़ती मांग को देखते हुए इसकी खेती मुनाफे का सौदा साबित हो रही है। हर्बल और कास्मेटिक्स में इसकी मांग निरंतर बढ़ती ही जा रही है। इन प्रोडक्टसों में अधिकांशत: एलोवेरा का उपयोग किया जा रहा है। सौंदर्य प्रसाधन के सामान में इसका सर्वाधिक उपयोग होता है। वहीं हर्बल उत्पाद व दवाओं में भी इसका प्रचुर मात्रा में उपयोग किया जाता है। आज बाजार में एलोवेरा से बने उत्पादों की मांग काफी बढ़ी हुई है। एलोवेरा फेस वॉश, एलोवेरा क्रीम, एलोवेरा फेस पैक और भी कितने प्रोक्ट्स है जिनकी मार्केट मे डिमांड है। इसी कारण आज हर्बल व कास्मेटिक्स उत्पाद व दवाएं बनाने वाली कंपनियां इसे काफी खरीदती है।

एलोवेरा (aloe vera) की बाजार में बढ़ती मांग, खासकर त्वचा और स्वास्थ्य उत्पादों में, प्राकृतिक और जैविक घटकों के प्रति लोगों की बढ़ती रुचि के कारण है. एलोवेरा जेल, अपने सुखदायक और उपचार गुणों के लिए, सौंदर्य प्रसाधन में एक लोकप्रिय घटक है, और एलोवेरा जूस, अपने स्वास्थ्य लाभों के लिए, स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोगों के बीच लोकप्रिय हो रहा है।

एलोवेरा की बाजार में बढ़ती मांग के कुछ प्रमुख कारण

प्राकृतिक और जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग-

उपभोक्ता सिंथेटिक रसायनों के हानिकारक प्रभावों के बारे में अधिक जागरूक हो रहे हैं और प्राकृतिक और जैविक उत्पादों की तलाश कर रहे हैं, जो त्वचा और स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होते हैं।

एलोवेरा के स्वास्थ्य लाभ-

एलोवेरा जेल सनबर्न को कम करने, सूजन को कम करने, त्वचा की जलन को शांत करने और त्वचा को नमी प्रदान करने में मदद करता है. एलोवेरा जूस पाचन में सहायता करने, प्रतिरक्षा प्रणाली का समर्थन करने और त्वचा के स्वास्थ्य में सुधार करने में मदद करता है।

सौंदर्य प्रसाधन और स्वास्थ्य उत्पादों में उपयोग-

एलोवेरा जेल, स्किनकेयर उत्पादों जैसे क्रीम, लोशन, फेस मास्क और शैम्पू में एक लोकप्रिय घटक है, और एलोवेरा जूस,

ISSN: 3049-2211

स्वास्थ्य पूरक, पेय पदार्थों और अन्य खाद्य उत्पादों में उपयोग किया जाता है।

एलोवेरा की उपलब्धता-

एलोवेरा दुनिया भर में आसानी से उपलब्ध है, और इसकी खेती करना आसान है, जो इसकी मांग को बढ़ाता है।

एलोवेरा की किफायती कीमत-

एलोवेरा की खेती के लिए कम लागत लगती है, जिससे यह कई उपभोक्ताओं के लिए एक किफायती विकल्प बन जाता है।

एलोवेरा बाजार में तेजी से बढ़ रहा है, और अनुमान है कि आने वाले वर्षों में भी यह इसी तरह से बढ़ेगा। यूरोपीय उपभोक्ता तेजी से पोषण संबंधी पूरक और स्वास्थ्य उत्पादों की तलाश कर रहे हैं। अधिक उपभोक्ता बीमारियों की रोकथाम और रखरखाव के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य और तंदुरुस्ती को बेहतर बनाने के लिए प्राकृतिक उत्पादों और उपचारों की ओर रुख कर रहे हैं। स्वास्थ्य उत्पाद कंपनियां अपने उत्पादों को विकसित करते समय प्राकृतिक अवयवों पर ध्यान दे रही हैं। *एलोवेरा* -आधारित स्वास्थ्य उत्पाद यूरोपीय उपभोक्ताओं के बीच अच्छी तरह से जाने जाते हैं और स्थापित हैं।

उत्पाद विवरण

एलो जीनस की 500 से अधिक प्रजातियों के साथ , *एलो वेरा एलो* जीनस की मुख्य व्यावसायिक रूप से खेती की जाने वाली प्रजाति है । भारत, मैक्सिको, डोमिनिकन गणराज्य, दक्षिण अफ्रीका, चीन और कोस्टा रिका में इसकी व्यापक रूप से खेती की जाती है। एलो वेरा के कई अनुप्रयोग हैं और इसका उपयोग सौंदर्य प्रसाधन, खाद्य और प्रसाधन सामग्री और दवा उद्योगों द्वारा किया जाता है। यह अध्ययन यूरोपीय प्राकृतिक स्वास्थ्य उत्पादों के बाजार में एलो वेरा के उपयोग पर केंद्रित है।

एलोवेरा के कई स्वास्थ्य लाभ हैं; ऐसा इसलिए है क्योंकि एलोवेरा में विटामिन, खनिज और अमीनो एसिड होते हैं; जीवाणुरोधी, एंटीवायरल और एंटीसेप्टिक गुण; घाव भरने में तेजी लाने, दांतों की मैल को कम करने और मुंह के छालों के इलाज में मदद करने की क्षमता; सकारात्मक रेचक प्रभाव; और त्वचा को बेहतर बनाने और झुर्रियों को रोकने की क्षमता। यह रक्त शर्करा के स्तर को भी कम कर सकता है।

स्रोत: विविध

अंतर्राष्ट्रीय एलो विज्ञान परिषद (आईएएससी) के अनुसार, एलोवेरा का रस प्राप्त करने के लिए पत्ती प्रसंस्करण और आंतरिक पत्ती प्रसंस्करण विधि, व्यावसायिक रूप से उपलब्ध उत्पादों में सबसे अधिक उपयोग की जाती है।

1. **पत्ती प्रसंस्करण विधि-** इस विधि में, *एलोवेरा* पत्ती का रस पूरी *एलोवेरा* पत्ती को पीसकर या मसलकर प्राप्त किया जाता है, इसके बाद लेटेक्स में पाए जाने वाले फेनोलिक यौगिकों को हटाने के लिए शुद्धिकरण किया जाता है। यह शुद्धिकरण चरण आमतौर पर सक्रिय कार्बन निस्पंदन के माध्यम से एक प्रक्रिया में पूरा किया जाता है जिसे डीकोलराइजेशन के रूप में जाना जाता है।
2. **आंतरिक पत्ती प्रसंस्करण विधि-** इस विधि में, *एलोवेरा* पत्ती का रस बाहरी पत्ती के छिलके को हटाकर, लेटेक्स को धोकर या धोकर और शेष आंतरिक पत्ती सामग्री को संसाधित करके प्राप्त किया जाता है। इस विधि में कभी-कभी रंग-विरंजन का भी उपयोग किया जाता है।

एलोवेरा की पत्तियों के प्रसंस्करण से जैल और रस प्राप्त होते हैं जिनका उपयोग स्वास्थ्य उत्पादों, खाद्य और सौंदर्य प्रसाधन उद्योगों द्वारा किया जाता है। एलोवेरा का प्रसंस्करण विकासशील देशों या यूरोप में किया जा सकता है। हालाँकि, प्रसंस्करण आमतौर पर विकासशील देशों में किया जाता है, क्योंकि इससे एलोवेरा के अधिकांश लाभकारी गुणों को बनाए रखने में मदद मिलती है ।

एलोवेरा का उपयोग हर्बल औषधीय उत्पादों में किया जाता है: इसे केवल सूखे, केंद्रित पत्ती के रस (उदाहरण के लिए, लेटेक्स) के रूप में ही अनुमति दी जाती है। खाद्य पूरकों में, एलोवेरा जैल, अर्क और लेटेक्स के उपयोग की अनुमति है, हालांकि इसके लेटेक्स को केवल अपवादों के साथ अनुमति दी जाती है (खाद्य पूरकों के लिए विशिष्ट आवश्यकताएं देखें)। सूखे एलोवेरा लेटेक्स का उपयोग औषधीय उद्देश्यों के लिए किया जाता है और इसकी संरचना कई आधिकारिक फार्माकोपिया में निर्दिष्ट की गई है। एलोवेरा के कई फायदे हैं, जिनमें त्वचा, बालों और स्वास्थ्य के लिए उपयोग शामिल है।

एलोवेरा के फायदे

त्वचा के लिए-

एलोवेरा का जेल त्वचा को नमी प्रदान करता है, सनबर्न को शांत करता है, घावों को भरने में मदद करता है और त्वचा की समस्याओं को कम करता है।

बालों के लिए-

एलोवेरा बालों को मजबूत बनाता है, रूसी को कम करता है और बालों की चमक को बढ़ाता है।

ISSN: 3049-2211

स्वास्थ्य के लिए-

एलोवेरा का जूस पाचन में सुधार करता है, कब्ज को दूर करता है, वजन घटाने में मदद करता है और मधुमेह को नियंत्रित करने में मदद करता है।

अन्य फायदे-

एलोवेरा को एंटी-इंफ्लेमेटरी, एंटी-ऑक्सीडेंट और एंटी-बैक्टीरियल गुणों से भरपूर माना जाता है।

एलोवेरा के उपयोग

त्वचा पर-

एलोवेरा जेल को सीधे त्वचा पर लगाया जा सकता है या इसे अन्य सामग्रियों के साथ मिलाकर भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

बालों पर-

एलोवेरा जेल को बालों पर लगाकर, धोकर या शैम्पू में मिलाकर इस्तेमाल किया जा सकता है।

स्वास्थ्य के लिए-

एलोवेरा का जूस खाली पेट या अन्य पेय पदार्थों के साथ पिया जा सकता है।

एलोवेरा के कुछ नुकसान

- ♣ कुछ लोगों को एलोवेरा के प्रति एलर्जी हो सकती है।
- ♣ एलोवेरा के सेवन से कुछ लोगों को पेट में दर्द या दस्त हो सकते हैं।

निष्कर्ष-

एलोवेरा एक बहुमुखी और फायदेमंद पौधा है, जिसका उपयोग त्वचा, बालों और स्वास्थ्य के लिए किया जा सकता है. हालाँकि, कुछ लोगों को एलोवेरा से एलर्जी या अन्य समस्याएं हो सकती हैं, इसलिए इसका उपयोग करने से पहले अपने डॉक्टर से सलाह लेना बेहतर होता है।

♣♣♣

कृषि उत्पादन में मौसम पूर्वानुमान की भूमिका

धीरेन्द्र कुमार शुक्ला- कृषि मौसम विज्ञान विभाग
अमित कुमार यादव- शोध छात्र, कृषि सांख्यिकी विभाग
कीर्ति वर्धन पाण्डेय एवं जीतन राज- कृषि मौसम विज्ञान विभाग
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या (उ.प्र.)

वर्तमान समय में कृषि मुख्यतः ऋतु एवं मौसम पर निर्भर है, जहाँ तापमान, वर्षा और आर्द्रता फसल उत्पादन को सीधे प्रभावित करते हैं। मौसम अल्पकालिक वायुमंडलीय स्थिति को दर्शाता है, जबकि जलवायु किसी क्षेत्र की दीर्घकालीन मौसमीय प्रवृत्ति को प्रकट करती है। मौसम की अनिश्चितता और चरम घटनाएँ फसल वृद्धि, उपज एवं गुणवत्ता को प्रभावित कर सकती हैं। सटीक मौसम पूर्वानुमान किसानों को बुवाई, सिंचाई, उर्वरक प्रयोग तथा रोग-कीट प्रबंधन में सही निर्णय लेने में सहायता प्रदान करता है। कृषि मौसम सेवाएँ संभावित नुकसान को कम कर उत्पादन स्थिरता बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इस प्रकार, मौसम आधारित कृषि प्रबंधन सतत एवं लाभकारी खेती की दिशा में एक प्रभावी कदम है।

मौसम पूर्वानुमान का अर्थ है किसी स्थान के वायुमंडलीय दशाओं की भविष्य में संभावित स्थिति का आकलन करना। कृषि उत्पादन किसी भी ऋतु में हुई वर्षा तथा दो ऋतुओं के मध्य के मौसमीय परिवर्तनों से सीधे प्रभावित होता है। सही मौसम जानकारी किसानों को समय पर योजना बनाने, लागत घटाने तथा उत्पादन और लाभ को अधिकतम करने में सहायता करती है। जब फल, सब्जी या दलहनी फसलों की खेती की बात आती है, तब तापमान की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है। पूर्व में किसान मौसम के वैज्ञानिक पूर्वानुमान से अनभिज्ञ थे और पारंपरिक अनुभव के आधार पर निर्णय लेते थे, जिसके कारण कई बार नुकसान उठाना पड़ता था। वर्तमान में उन्नत प्रौद्योगिकी और विशेष मौसम पूर्वानुमान तंत्र उपलब्ध होने से किसान स्मार्टफोन के माध्यम से अद्यतन जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। अधिकांश फसलें 30–40 डिग्री सेल्सियस तापमान के मध्य अच्छी वृद्धि करती हैं। तापमान में कमी होने पर सामान्यतः वायुमंडलीय आर्द्रता बढ़ जाती है। शुष्क एवं तेज हवाओं वाले क्षेत्रों में पौधों की वृद्धि अवरुद्ध हो सकती है। ऐसी परिस्थितियों में कोशिकाओं में नमी की कमी के कारण पौधे पूर्ण रूप से विकसित नहीं हो पाते। वर्षा, बादल, वायुमंडलीय आर्द्रता, तापमान, वायुदाब, पवन दिशा तथा पवन वेग मौसम के प्रमुख घटक हैं। इसके अतिरिक्त मानसूनी हवाएँ, चक्रवाती प्रवाह, कोहरा, ओस, पाला और हिम जैसी घटनाएँ भी मौसम की प्रकृति को प्रभावित करती हैं।

मौसम पूर्वानुमान की आवश्यकता

मौसम की परिस्थितियाँ प्रत्येक क्षेत्र में भिन्न-भिन्न होती हैं, इसलिए हर स्थान की अपनी विशिष्ट भविष्यवाणियाँ आवश्यक होती हैं।

ISSN: 3049-2211

इससे किसानों को यह समझने में सुविधा मिलती है कि किस समय और किस प्रकार कृषि कार्यों की योजना बनाई जाए। कृषि और मौसम के घनिष्ठ संबंध के कारण सटीक मौसम पूर्वानुमान की आवश्यकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है, जो किसानों को समय पर उचित निर्णय लेने में सक्षम बनाता है तथा संभावित नुकसान को कम करने में सहायक सिद्ध होता है। तापमान, धूप और वर्षा का फसलों पर अलग-अलग प्रकार से प्रभाव पड़ता है। कृषि आय में पशुपालन का भी महत्वपूर्ण योगदान है। पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादन के लिए उपयुक्त तापमान, पर्याप्त जल तथा संतुलित आहार आवश्यक होते हैं, जिन पर मौसम का सीधा प्रभाव पड़ता है। मौसम पूर्वानुमान किसानों को कृषि कार्यों की अग्रिम योजना बनाने में सहायता करता है। इसके माध्यम से यह निर्णय लिया जा सकता है कि बुवाई प्रारंभ की जाए या स्थगित की जाए, सिंचाई की आवश्यकता है या नहीं, उर्वरकों का प्रयोग कब किया जाए तथा कटाई का उपयुक्त समय क्या हो। ये सभी प्रमुख निर्णय मौसम पूर्वानुमान पर आधारित होते हैं। सिंचाई कृषि उत्पादन की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है, जिसमें भूमि पर जल का कृत्रिम प्रयोग किया जाता है। मौसम की परिवर्तनशीलता से सिंचाई की आवृत्ति तथा फसल की जल आवश्यकता प्रभावित होती है। समय पर और सटीक पूर्वानुमान कृषि प्रबंधन की दो प्रमुख आवश्यकताएँ हैं। जलवायु परिवर्तन एक ऐसा कारक है, जिसके प्रति सभी किसानों को सजग रहना आवश्यक है। शुष्क परिस्थितियों की लंबी अवधि, जिसे सामान्यतः सूखा कहा जाता है, सिंचाई व्यवस्था पर गहरा प्रभाव डालती है। ऐसी परिस्थितियों में कृषि प्रबंधन करने वालों को दैनिक एवं मौसमी जल उपयोग के क्रम को समझते हुए आधुनिक तकनीकों को अपनाना आवश्यक हो जाता है।

मौसम पूर्वानुमान की उपयोगिता

यदि किसान को मौसम की सटीक जानकारी समय रहते प्राप्त हो जाए, तो वह अपने कृषि कार्यों की योजना उसी के अनुसार निर्धारित कर सकता है। इसका परिणाम यह होता है कि फसल उत्पादन बेहतर एवं संतुलित रूप से प्राप्त होता है। उर्वरकों का सही समय पर और उचित मात्रा में प्रयोग उपज बढ़ाने में सहायक होता है, साथ ही पोषक तत्वों की क्षति को कम करता है और पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देता है। यदि मौसम की स्थिति को ध्यान में रखे बिना उर्वरक का प्रयोग किया जाए, तो संसाधनों की बर्बादी के साथ-साथ फसल को भी नुकसान पहुँच सकता ह। अतः उर्वरकों के प्रयोग की विधि एवं समय का ज्ञान आवश्यक है। मौसम पूर्वानुमान किसानों को यह निर्णय लेने में सहायता करता है कि फसल की देखभाल कब और किस प्रकार की जाए। गलत समय पर उर्वरक प्रयोग करने से धन और श्रम दोनों की हानि हो सकती है। इसलिए

उचित जानकारी और सटीक पूर्वानुमान अत्यंत आवश्यक हैं। तापमान में असामान्य परिवर्तन का प्रभाव पौधों और कीटों दोनों पर पड़ता है। अत्यधिक तापमान से फसल की उत्पादकता घट सकती है तथा कीटों का प्रकोप बढ़ सकता है। खेत और फसलों को कीटों से सुरक्षित रखने के लिए प्रभावी कीट एवं रोग प्रबंधन आवश्यक है। मौसम पूर्वानुमान किसानों को यह समझने में मदद करता है कि फसल की संभावित क्षति से बचाव हेतु कीटनाशकों अथवा अन्य नियंत्रण उपायों का प्रयोग कब किया जाना चाहिए।

प्रमुख फसलों पर प्रतिकूल मौसम का प्रभाव

फसल	उपयुक्त तापमान (°C)	प्रतिकूल मौसम में प्रमुख रोग/कीट	संभावित प्रभाव
गेहूँ	10–18	पीला रतुआ, भूरा रतुआ, करनाल बंट	उपज में कमी, दाने की गुणवत्ता प्रभावित
धान	20–38	तना छेदक, पत्ती लपेटक सुंडी, तेला	पत्तियों की क्षति, दाने भराव में कमी
मक्का	20–35 (सामान्य वृद्धि)	तना छेदक, फॉल आर्मीवर्म	पौध क्षति, भुट्टे का विकास प्रभावित
कपास	25–33	पत्ती कोणीय धब्बा, लीफ कर्ल रोग	पत्तियों का सिकुड़ना, उत्पादन घटाव
सरसों	10–20	काला धब्बा, सफेद रतुआ, डाउनी मिल्ड्यू, तना गलन	फली विकास प्रभावित, उत्पादन हानि

ISSN: 3049-2211

मौसम पूर्वानुमान की अवधि

मौसम पूर्वानुमान समय-समय पर विभिन्न अवधियों के लिए जारी किया जाता है। अवधि के आधार पर इसे सामान्यतः अलग-अलग श्रेणियों में विभाजित किया जाता है, जिससे किसान अपनी आवश्यकताओं के अनुसार निर्णय ले सकें।

▪ मध्यम अवधि का मौसम पूर्वानुमान

इसके अंतर्गत मौसम की जानकारी लगभग 3 से 10 दिनों के लिए जारी की जाती है। यह पूर्वानुमान कृषि कार्यों जैसे सिंचाई, उर्वरक प्रयोग, कीटनाशक छिड़काव तथा कटाई की योजना बनाने में अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है। अल्पकालिक जोखिमों से बचाव के लिए यह विशेष रूप से सहायक है।

▪ दीर्घकालीन मौसम पूर्वानुमान

यह पूर्वानुमान अपेक्षाकृत लंबे समय के लिए जारी किया जाता है। सामान्यतः इसकी अवधि एक माह से लेकर एक पूरे मौसम या फसल चक्र तक हो सकती है। दीर्घकालीन पूर्वानुमान फसल चयन, बुवाई समय निर्धारण तथा जल प्रबंधन जैसी रणनीतिक योजनाओं के लिए उपयोगी होता है।

कृषि मौसम सेवा संरचना

भारत में कृषि मौसम सेवाएँ एक बहु-स्तरीय प्रणाली के अंतर्गत संचालित होती हैं, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय स्तर से किसान स्तर तक मौसम आधारित परामर्श पहुँचाना है। यह संरचना पाँच स्तरों में कार्य करती है

- ❖ राष्ट्रीय स्तर (नई दिल्ली)– नीतियों एवं दिशा-निर्देशों का निर्धारण।
- ❖ राष्ट्रीय क्रियान्वयन स्तर (पुणे)– तकनीकी समन्वय एवं कार्यक्रमों का संचालन।
- ❖ राज्य स्तर– राज्य कृषि मौसम केंद्रों द्वारा जिलों के बीच समन्वय।
- ❖ जिला स्तर– स्थानीय मौसम आँकड़ों के आधार पर फसल-विशिष्ट सलाह तैयार करना।
- ❖ प्रसार स्तर– एसएमएस, आईसीटी, मोबाइल ऐप एवं कृषि विज्ञान केंद्रों के माध्यम से किसानों तक परामर्श पहुँचाना।

कृषि मौसम सेवा के मूल उद्देश्य

कृषि मौसम सेवाओं का उद्देश्य किसानों को समय पर वैज्ञानिक मौसम जानकारी उपलब्ध कराकर कृषि उत्पादन को अधिक सुरक्षित एवं लाभकारी बनाना है। इसके प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

1. किसानों को मौसम संबंधी सभी महत्वपूर्ण घटनाओं से समय रहते अवगत कराना।
2. मौसम आधारित संभावित नुकसान को कम कर उत्पादन में वृद्धि करना।
3. कृषि संबंधी कार्यों का उचित समय पर निर्धारण करने में सहायता प्रदान करना।
4. बुवाई एवं कटाई के समय सटीक मौसम जानकारी उपलब्ध कराना।
5. उन्नत एवं तकनीकी रूप से सशक्त कृषि को प्रोत्साहित करना।

मौसम पूर्वानुमान प्राप्त करने के साधन

कृषि मौसम पूर्वानुमान किसान विभिन्न माध्यमों से प्राप्त कर सकते हैं। मौसम पूर्वानुमान तभी सार्थक सिद्ध होता है, जब किसान उसका उचित उपयोग कर सकें। इसलिए यह आवश्यक है कि किसानों को यह जानकारी हो कि वे मौसम संबंधी सूचनाएँ किन-किन स्रोतों से प्राप्त कर सकते हैं। साथ ही, मौसम सेवाएँ प्रदान करने वाली संस्थाओं का दायित्व है कि वे इन सूचनाओं को अधिकतम किसानों तक सरल और सुलभ रूप में पहुँचाएँ। भारत मौसम विज्ञान विभाग (IMD) द्वारा आधुनिक उपकरणों और उन्नत प्रौद्योगिकी के माध्यम से मौसम संबंधी आँकड़े एकत्र किए जाते हैं तथा उनके आधार पर पूर्वानुमान और चेतावनी सेवाएँ जारी की जाती हैं। हाल के वर्षों में पूर्वानुमान सेवाओं के प्रसार के लिए अनेक डिजिटल पहलें की गई हैं।

मौसम संबंधी जानकारी वेबसाइट, ई-मेल, एसएमएस तथा सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म जैसे फेसबुक, ट्विटर और इंस्टाग्राम के माध्यम से भी उपलब्ध कराई जाती है। इसके अतिरिक्त मोबाइल आधारित एप्लीकेशन और डिजिटल पोर्टल भी किसानों को समय पर अद्यतन जानकारी प्रदान करते हैं।

मौसम पूर्वानुमान के लिए विभिन्न स्रोत

क्र.	माध्यम / प्लेटफॉर्म	विवरण / लिंक
1	आधिकारिक वेबसाइट	https://mausam.imd.gov.in
2	मोबाइल एप्लीकेशन	Mausam, Meghdoot, DAMINI, Rain Alarm, UMANG
3	ट्विटर (X)	https://twitter.com/Indiametdept
4	फेसबुक	https://www.facebook.com/India.Meteorological.Department
5	ब्लॉग	https://imdweather1875.wordpress.com
6	इंस्टाग्राम	https://www.instagram.com/mausam_nwfc
7	यूट्यूब चैनल	https://www.youtube.com/channel/UC_qxTReoq07UVARm87CuyQw

ISSN: 3049-2211

सूचना स्रोत

मौसम पूर्वानुमान संबंधी सूचनाएँ विभिन्न माध्यमों से सरलता से प्राप्त की जा सकती हैं। किसानों को चाहिए कि वे विश्वसनीय स्रोतों से नियमित रूप से अद्यतन जानकारी प्राप्त करें, ताकि कृषि कार्यों की योजना वैज्ञानिक आधार पर बनाई जा सके। मौसम संबंधी जानकारी निम्नलिखित स्रोतों से प्राप्त की जा सकती है:

1. दूरदर्शन का किसान चैनल तथा अन्य टीवी चैनल
2. क्षेत्रीय एवं राष्ट्रीय समाचार पत्र और रेडियो चैनल
3. कषि विज्ञान केंद्र (KVK) 4 भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (ICAR) के संस्थान
4. कृषि विश्वविद्यालय
5. राज्य एवं केंद्रीय कृषि विभाग
6. कृषि संबंधी मोबाइल एप्लीकेशन
7. मौसम विशेष मोबाइल एप जैसे – "मेघदूत", "दमिनी" आदि इन माध्यमों के द्वारा किसानों को समय पर चेतावनी, वर्षा पूर्वानुमान, तापमान जानकारी तथा कृषि परामर्श उपलब्ध कराया जाता है।

जलवायु परिवर्तन के दीर्घकालीन प्रभाव को कम करने में किसान की भूमिका

जलवायु परिवर्तन के नकारात्मक प्रभाव कृषि क्षेत्र में स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगे हैं। तापमान में असामान्य वृद्धि, वर्षा के पैटर्न में परिवर्तन तथा चरम मौसमी घटनाओं की आवृत्ति बढ़ने से कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है। सरकार द्वारा विभिन्न योजनाएँ और परियोजनाएँ संचालित की जा रही हैं, किन्तु केवल सरकारी प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। इन प्रभावों को कम करने में किसानों की सक्रिय भागीदारी अत्यंत आवश्यक है। जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों को कम करने के लिए किसान निम्नलिखित उपाय अपना सकते हैं-

1. अधिकाधिक वृक्षारोपण करना चाहिए।
2. फसल अवशेषों को जलाने से बचना चाहिए, क्योंकि इससे पर्यावरण तथा मृदा दोनों को नुकसान होता है।
3. सौर ऊर्जा का उपयोग बढ़ाना चाहिए।
4. ऊर्जा संरक्षण के लिए ऊर्जा-कुशल उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए।
5. पेट्रोल एवं डीजल चालित वाहनों के उपयोग को सीमित करना चाहिए।
6. प्लास्टिक के उपयोग को कम कर पर्यावरण प्रदूषण को घटाना चाहिए।
7. खेतों में जैव गैस संयंत्र (गोबर गैस प्लांट) स्थापित कर मीथेन गैस का सदुपयोग किया जा सकताहै।
8. अत्यधिक सिंचाई से बचकर जल की बर्बादी को रोका जा सकता है।

किसान विभिन्न रोगों और कीटों से फसल को सुरक्षित रखने का निरंतर प्रयास करता है। इन परिस्थितियों में मौसम पूर्वानुमान महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि किसानों को कीटों के अनुकूल मौसम की अग्रिम जानकारी मिल जाए, तो वे समय रहते नियंत्रण उपाय अपना सकते हैं।

गाय एवं गोबर खाद की उपयोगिता

[1]**सुक्रमपाल सिंह-** सहायक कृषि अधिकारी, राज्य स्तरीय बीज परीक्षण प्रयोगशाला, कृषि निदेशालय, जिलाः देहरादून, (उत्तराखंड)
[2]**टीना कोठारी-** बी.ए. (कला वर्ग), मैथलीस्ट गर्ल्स महाविद्यालय, रूकड़ी, हरिद्वार (उत्तराखंड)

कृषि भारत की रीढ़ है और पशुपालन इसका अभिन्न अंग है। कृषि व पशुपालन ही किसान के दो मजबूत हाथ हैं। प्राचीनकाल से ही किसान कृषि व पशुपालन को साथ-साथ करते आए हैं, ताकि वे स्वयं स्वस्थ रहकर, अपने पशुओं को स्वस्थ रखकर अधिक लाभ प्राप्त कर सके हैं। फसल उत्पादन एवं पशुपालन वास्तव में एक दूसरे के पूरक हैं। पशुओं से गोबर की खाद प्राप्त होती है। उसे फसल उत्पादन के लिए मिट्टी की उर्वरता को सुधारने में उपयोग किया जाता है। दूसरी तरफ खेती से प्राप्त चारा एवं उप-उत्पादों को पशुओं के भोजन के लिए उपयोग किया जाता हैं। पशुपालन मुख्यतः दूध, मांस अथवा ऊन उत्पादन के लिए किया जाता है तथा इसमें गाय, भैंस, बकरी, भेड़, सूअर आदि का पालन किया जाता हैं। भारतीय संस्कृति में गाय को माता माना गया है। कहा जाता है कि गाय का मुख अशुद्ध होता है और शरीर का पिछला भाग शुद्ध होता है। घर में गौ मूत्र छिड़कने के साथ ही सुबह-शाम भगवान के समक्ष गाय के दूध से निर्मित घी का दीपक जलाने से इससे घर के सभी वास्तुदोष दूर होते हैं। साथ ही घर में सक्रिय नकारात्मक ऊर्जा का प्रभाव खत्म हो जाता है। घर का वातावरण शुद्ध होता है और सदस्य निरोगी बने रहते हैं। गाय की सेवा से लक्ष्मी सहित सभी देवी-देवताओं की कृपा प्राप्त होती है। हमारे शास्त्रों में कहा गया है कि गाय के शरीर में सभी देवी-देवताओं का वास होता है, इसी कारण गाय की सेवा का अक्षय पुण्य प्राप्त होता है। गाय की सेवा से सुखों को देने वाले भगवान शिव भी प्रसन्न होते हैं। गोमूत्र के प्रभाव से घर में फैले सभी हानिकारक कीटाणु नष्ट हो जाते हैं, साथ ही देवी की विशेष कृपा बनी रहती है, इसलिए गौ मूत्र छिड़कने से समृद्धि बढ़ती है।

भारत में प्राचीन काल से कृषि के साथ-साथ गौ-पालन किया जाता था, परन्तु बदलते परिवेश में गाय पालन धीरे-धीरे कम हो गया तथा कृषि में तरह-तरह के रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का प्रयोग हो रहा है। जिसके कारण जैविक एवं अजैविक पदार्थों के चक्र का संतुलन बिगड़ता जा रहा है। रासायनिक उर्वरकों के अत्यधिक उपयोग के कारण भारतीय मृदाओं में कार्बनिक पदार्थों एवं नत्रजन की आमतौर पर कमी पाई जाती है। इस प्रकार की समस्याओं के निदान हेतु वर्तमान में टिकाऊ

ISSN: 3049-2211

खेती करने हेतु गाय से प्राप्त गोबर खाद को उपयोग करने की सिफारिश की गई। ऐसे परिप्रेक्ष्य में गोबर खाद एक विकल्प नही, बल्कि आवश्यकता बन गई है। गोबर की खाद सर्वाधिक खादों में से एक है। परम्परागत खाद तैयार करने में 5-8 माह लगते हैं। इस खाद में खरपतवारों के बीज गल-सड़ कर नष्ट हो जाते हैं। खाद में दीमक भी नही लगती है। उचित मात्रा में तापमान व नमी मिलने से सूक्ष्म जीवाणुओं की सक्रियता पुरानी विधि की तुलना में तीव्र रहती है। रासायनिक उर्वरक फसल के लिए उपयुक्त जीवाणुओं को नष्ट कर देती है। इन सूक्ष्म जीवाणुओं कें तंत्र को विकसित करने के लिए गोबर खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए, जिससे फसल के लिए मित्र जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि, हवा संचार, जल को पर्याप्त मात्रा में सोखने की क्षमता में वृद्धि होती है। अच्छी से गलने व सड़ने के कारण पोषक तत्व शीघ्र व संतुलित मात्रा में फसल को मिलते हैं। सही रूप से तैयार गोबर की खाद में नत्रजन 0.4-0.6 प्रतिशत, स्फुर 0.2-0.3 प्रतिशत एवं पोटाश की मात्रा 0.5 से 0.6 प्रतिशत व अन्य सूक्ष्म पोषक तत्व भी उचित मात्रा में पाये जाते हैं।

क्या है, गोबर की खाद

पशुओं के मल-मूत्र, बचा हुआ चारा आदि पदार्थों के अपघटन से बनाई हुई खाद गोबर की खाद कहते हैं। यह फसलों, सब्जियों, फलों-फूलों के लिए उत्तम खाद होती है।

गोबर की खाद बनाने की विधि

सर्वप्रथम गाय के गोबर को लम्बाई में ढेर बनाया जाता है, इसकी ऊँचाई 2.0 से 2.5 मी. चौड़ाई तथा लम्बाई उपलब्ध जगह के अनुसार 10-100 मीटर या उससे अधिक रखी जाती है। गोबर एवं फसल अवशेषों के ऊपर सूक्ष्मजीवी कल्चर का चूर्ण या द्रव छिड़काव किया जा सकता है। कल्चर डालने के तुरन्त बाद पहली पलटाई करते हैं, द्वितीय पलटाई 10 दिन बाद, तीसरी 25 दिन बाद, चौथी 40 दिन बाद तथा पांचवीं 55-60 दिन पर करते हैं। इस प्रणाली में 7-8 माह में गोबर कम्पोस्ट खेत में डालने के लिए तैयार हो जाती है।

सारणी 1: विभिन्न कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा (प्रतिशत)

पोषक तत्व	नाडेप खाद	केंचुआ खाद	गोबर की खाद
नत्रजन	0.5-1.5	1.5-2.0	0.5-0.7
फॉस्फोरस	0.5-0.9	1.5-2.0	0.2-0.5
पोटाश	1.2-1.14	1.4-2.0	0.5-1.0

स्रोतः फर्टिलाजर न्यूज-1992

गोबर की खाद के लाभ

1. गोबर की खाद प्रयोग करने से मृदा में जैविक कार्बन का स्तर बढ़तता है, जिससे उपजाऊपन में वृद्धि होती है।
2. मृदा में जल धारण शक्ति में वृद्धि होती है व मृदा में जल का वाष्पीकरण कम होता है।
3. गोबर खाद के प्रयोग से पर्यावरण शुद्ध रहता है, जबकि रासायनिक उर्वरकों से वातावरण प्रदूषित होता है।
4. गाय के गोबर को जैविक खाद में परिवर्तित करने से गाँव में सफाई बनी रहती है व बीमारियों में कमी आती है।
5. गोबर खाद प्रयोग से उर्वरकों की 25 से 30 प्रतिशत तक मात्रा की बचत की जा सकती है। इस प्रकार उर्वरकों पर होने वाले खर्चों को कम किया जा सकता है।
6. गोबर में लाभदायक सूक्ष्मजीवों की संख्या अधिक होती है, जिसके फलस्वरूप नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले सूक्ष्म जीव, फॉस्फेट को उपलब्ध करने वाले सूक्ष्म इत्यादि की क्रियाशीलता कई गुना बढ़ जाती है एवं ये सूक्ष्म जीव मृदा में उपलब्ध पोषक तत्वों को पौधों के लिए अधिक मात्रा में उपलब्ध करवाते हैं।
7. गोबर खाद के उपयोग से मृदा के गुणों में वृद्धि ही नही करते अपितु उत्पादन की गुणवत्ता में भी वृद्धि होती है।

गाय एवं गोबर आधारित सरकारी योजनाएं

केन्द्र एवं राज्य सरकारों के स्तर पर सीमित संसाधनों के कारण गौ-पालन एवं गोबर सम्बन्धित समस्याओं का सामना करने के लिए अनेक योजनाएं और कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। उदारणार्थ-

1. गोबर-धन योजना:

भारत सरकार द्वारा अप्रैल 2018 में स्वच्छ भारत मिशन के अंतर्गत बायोडिग्रेडेबल अपशिष्ट प्रबंधन घटक के हिस्से के रूप में ग्रामीण स्वच्छता को सकारात्मक रूप से प्रभावित करने और पशु अपशिष्ट एवं जैविक कचरे से धन के साथ-साथ ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए शुरु की गई थी। इस योजना का मुख्य उद्देश्य गांवों को साफ रखना, ग्रामीण परिवारों की आय बढ़ाना और पशु अपशिष्ट से ऊर्जा एवं जैव-उर्वरक तैयार करना है। यह योजना गांवों में भारी मात्रा में मौजूद ठोस कचरे यानी मवेशियों के गोबर और कृषि कचरे के प्रबंधन में मद्द करती है। इस योजना के अंतर्गत पशुओं के गोबर और खेतों के ठोस अपशिष्ट

ISSN: 3049-2211

पदार्थों को कम्पोस्ट, बायोगैस और बायो-सीएनजी में परिवर्तित किया जाएगा। इस योजना के अंतर्गत पहले चरण में चयनित 115 जिलों के गांवों में ठोस और जानवरों के मलमूत्र का उपयोग खाद बनाने के लिए संसाधन उपलब्ध कराए जाएंगे। इससे ऊर्जा उत्पादन के उद्देश्यों का बढ़त मिलेगी और बायोगैस के निर्माण में एक क्रांति का आगाज होगा। इस योजना से देश में बड़ी मात्रा में नुकसान हो रहे गोबर एवं मानव व पशु का उपयोग हो सकेगा।

2. राष्ट्रीय गोकुल मिशनः

कृषि और पशु-पालन भारतीयों की पारंपरिक आजीविका है। पशुधन की दृष्टि से सम्पूर्ण भारत में लगभग 190 मिलियन गोपशु हैं, जो विश्व के कुल गोपशु संख्या का लगभग 14.5 प्रतिशत है। इनमें से 151 मिलियन (80 प्रतिशत) गोपशु देशी नस्ल के हैं। परन्तु, भारत में विगत कुछ वर्षों में बढ़ती क्रॉस ब्रीडिंग से देशी तथा विदेशी नस्लों की गायों के पहचान पर संकट उत्पन्न हो गया है। इसलिए देशी नस्ल की गायों के संरक्षण और नस्ल के आनुवंशिक विकास को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार के कृषि मंत्रालय द्वारा 28 जुलाई, 2014 को राष्ट्रीय गोकुल मिशन की शुरुआत की गई थी। गोकुल मिशन परियोजना के अंतर्गत वैज्ञानिक ढंग से देशी नस्लों का संरक्षण एवं विकास किया जा रहा है। राष्ट्रीय पशु प्रजनन एवं डेयरी विकास कार्यक्रम के अधीन राष्ट्रीय गोकुल मिशन द्वारा किए गए कार्य अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। इस योजना से जहाँ एक ओर खाद्य सुरक्षा के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकेगा, वहीं यह पशु पालकों की आय के स्तर को भी बढ़ाने में सहायक होगा।

प्रशिक्षण, तकनीकी जानकारी और कच्चे माल की आपूर्ति से सम्बंधित संस्थान

डेरी व्यवसाय एवं पशुपालन

1. राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान (एन.डी.आर.आई.), करनाल, हरियाणा-132001, फोनः 0184-252800
2. केन्द्रीय भैंस अनुसंधान संस्थान, सिरसा मार्ग, हिसार, हरियाणा-125001, फोनः 01662-39604, 38831
3. भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान, (आई.वी.आर.आई.), इज्जतनगर, बरेली; उत्तर प्रदेश फोनः 0581-477284, 447185
4. केन्द्रीय पक्षी अनुसंधान संस्थान, इज्जत नगर, बरेली; उ.प्र., फोनः 0581-2301261
5. निदेशक कार्यालय, कमरा नं. 101, पशु पालन विभाग, पुराना सचिवालय, दिल्ली, फोनः 011-23890485, 23890317

निष्कर्ष

गोबर खाद मृदा की जैविक, भौतिक व रासायनिक दशाओं को सुधारते हैं तथा मृदा को बंजर बनने से भी रोकते हैं। गोबर खाद का निर्माण अधिक से अधिक करके मृदा में वो सभी पोषक तत्वों की कमी पूरी कर सकते हैं, जो फसल एवं मृदा स्वास्थ्य के लिए आवश्क है। गोबर खाद वातावरण को सुरक्षित रखने में और स्वस्थ्य रखने में सहायक होता है। जिससे भविष्य में उगायी जाने वाली फसलों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकती है।

■■■

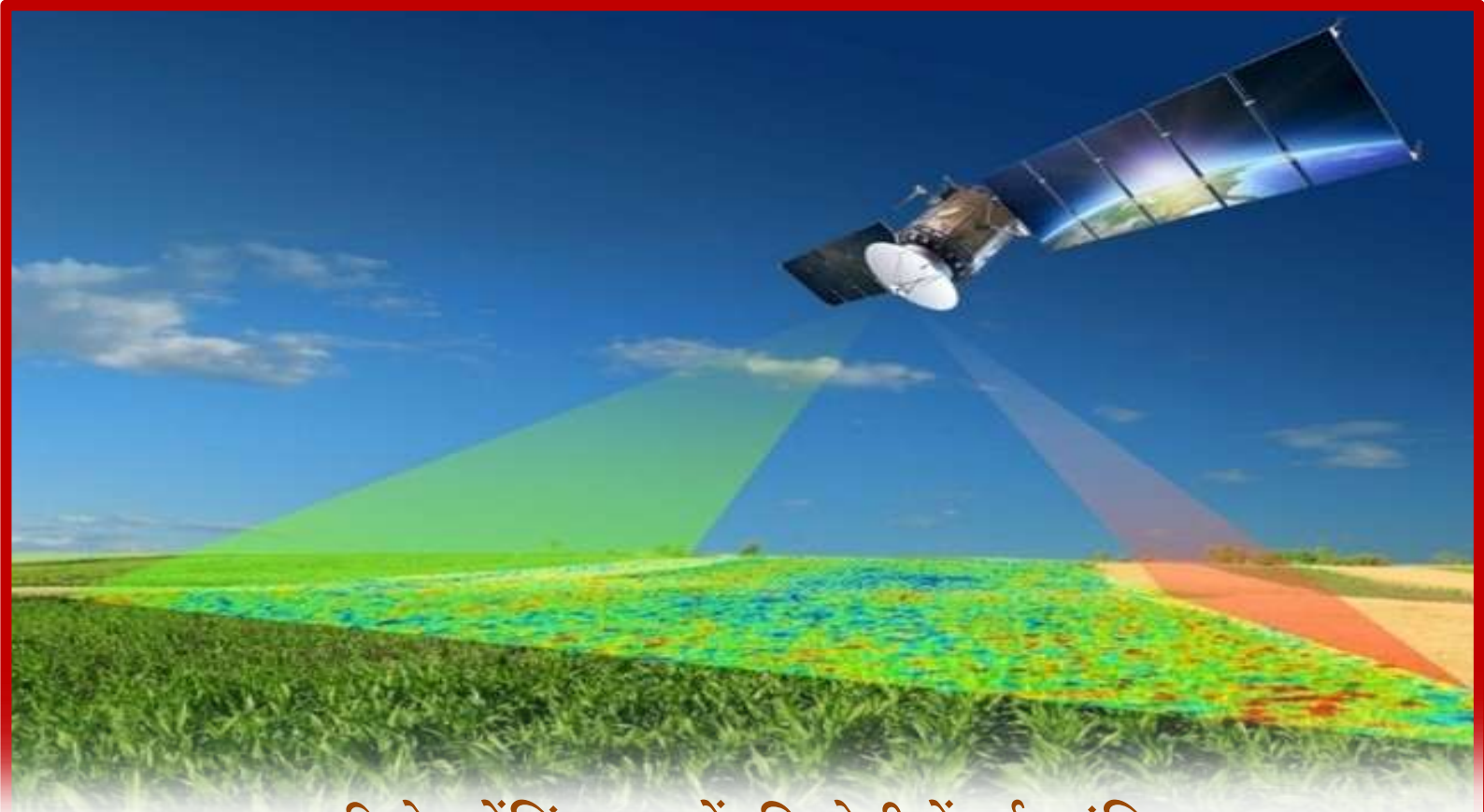

रिमोट सेंसिंग: फलों की खेती में नई क्रांति

डॉ. दीक्षा- पी.एच.डी. स्कॉलर (फल विज्ञान विभाग), कृषि विश्वविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
डॉ. विजय कुमार कश्यप- पी.एच.डी. स्कॉलर, आर.वी.एस. के. वि. वि. ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहाँ कृषि न केवल अर्थव्यवस्था की रीढ़ है बल्कि लाखों किसानों की आजीविका का प्रमुख साधन भी है। फलों की खेती भारतीय कृषि का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है, जो देश की खाद्य सुरक्षा और निर्यात को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। बदलते मौसम, बढ़ती जनसंख्या और सीमित प्राकृतिक संसाधनों के कारण आधुनिक तकनीकों को अपनाना अब पहले से कहीं अधिक आवश्यक हो गया है। इस दिशा में रिमोट सेंसिंग (Remote Sensing) तकनीक एक क्रांतिकारी बदलाव ला रही है।कृषि में रिमोट सेंसिंग का उपयोग मिट्टी की गुणवत्ता, फसल स्वास्थ्य, जल संसाधनों, कीट एवं रोग प्रबंधन, और उपज अनुमान जैसी गतिविधियों में किया जाता है। फलों की खेती में इस तकनीक के बढ़ते उपयोग से किसानों को सही निर्णय लेने में सहायता मिल रही है, जिससे उत्पादन में वृद्धि और गुणवत्ता में सुधार हो रहा है।

रिमोट सेंसिंग क्या है?

रिमोट सेंसिंग एक वैज्ञानिक तकनीक है जिसमें किसी वस्तु या स्थान की जानकारी बिना सीधे संपर्क में आए एकत्र की जाती है। कृषि के संदर्भ में, यह तकनीक उपग्रहों, ड्रोन, मल्टीस्पेक्ट्रल और हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग उपकरणों के माध्यम से खेतों की निगरानी और विश्लेषण करने में सहायता करती है।

रिमोट सेंसिंग तकनीक की आवश्यकता

आज की कृषि चुनौतियों को देखते हुए, पारंपरिक खेती की तकनीकें किसानों को सही समय पर आवश्यक जानकारी प्रदान करने में सक्षम नहीं हैं। जलवायु परिवर्तन, मिट्टी की उर्वरता में गिरावट, जल संकट, और बढ़ते कीट एवं रोग संक्रमण जैसी समस्याओं का प्रभावी समाधान निकालने के लिए उन्नत तकनीकों की आवश्यकता है।

रिमोट सेंसिंग किसानों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने और सटीक कृषि (Precision Agriculture) को अपनाने का अवसर प्रदान करता है। यह तकनीक भूमि उपयोग, फसल की स्थिति, और जल संसाधनों का विश्लेषण करने में मदद करती है, जिससे किसानों को अपने खेतों का अधिक कुशलतापूर्वक प्रबंधन करने का अवसर मिलता है।

फलों की खेती में रिमोट सेंसिंग के प्रमुख अनुप्रयोग

1. फसल स्वास्थ्य की निगरानी

रिमोट सेंसिंग तकनीक का उपयोग फलों के पौधों की सेहत की निगरानी के लिए किया जाता है। नाइट्रोजन की कमी, पानी की आवश्यकताओं और रोगों का पूर्वानुमान उपग्रह चित्रण और ड्रोन इमेजरी के माध्यम से संभव है।

ISSN: 3049-2211

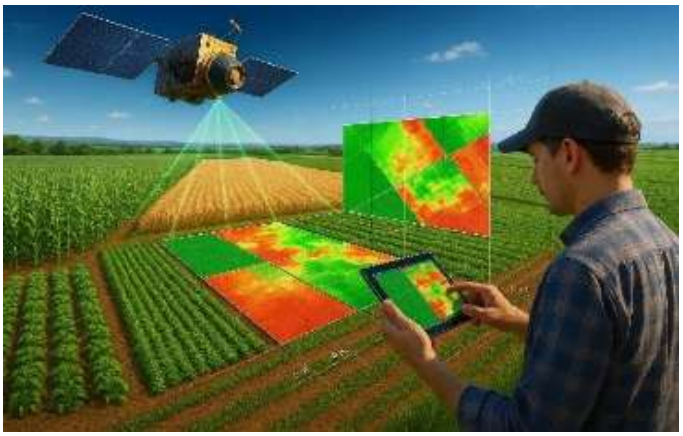

2. जलवायु प्रभावों की निगरानी

रिमोट सेंसिंग तकनीक के माध्यम से तापमान, नमी और अन्य जलवायु कारकों की निगरानी की जाती है। यह किसानों को जलवायु परिवर्तन के प्रति सतर्क रहने और समायोजन करने में मदद करता है।

3. कीट और रोग प्रबंधन

थर्मल और मल्टीस्पेक्ट्रल इमेजिंग के माध्यम से फलों के पेड़ों में रोगों और कीट संक्रमण का पता लगाया जा सकता है। यह तकनीक कीटनाशकों और जैविक नियंत्रण विधियों को सही समय पर लागू करने में सहायक होती है।

4. फसल की परिपक्वता और उपज का पूर्वानुमान

फलों की परिपक्वता का आकलन करने के लिए हाइपरस्पेक्ट्रल इमेजिंग और अन्य सेंसर तकनीकों का उपयोग किया जाता है। इससे किसानों को कटाई का सही समय निर्धारित करने में मदद मिलती है और बाजार में फलों की गुणवत्ता बनाए रखी जा सकती है।

5. बाजार पूर्वानुमान और व्यापार योजना

फसल उत्पादन का अनुमान लगाने और बाजार मांग की योजना बनाने के लिए उपग्रह डेटा का उपयोग किया जाता है। इससे किसानों को अपनी फसल को सही समय पर उचित कीमत पर बेचने में मदद मिलती है।

6. कटाई के बाद की प्रक्रियाओं में सुधार

फलों की गुणवत्ता और भंडारण स्थितियों की निगरानी के लिए रिमोट सेंसिंग तकनीक का उपयोग किया जाता है। इससे फलों की ताजगी बनाए रखने में मदद मिलती है।

7. फसल बीमा और आपदा प्रबंधन

प्राकृतिक आपदाओं के प्रभाव का आकलन करने और फसल बीमा दावों की सटीकता बढ़ाने के लिए रिमोट सेंसिंग का उपयोग किया जाता है। यह तकनीक किसानों को संभावित जोखिमों के प्रति सचेत कर सकती है।

8. भूमि उपयोग और क्षेत्रीय योजना

फलों की खेती के लिए उपयुक्त भूमि की पहचान करने और बागवानी क्षेत्रों की योजना बनाने में सहायता करता है। इससे कृषि विस्तार और सतत विकास को बढ़ावा मिलता है।

महत्वपूर्ण फसलों में रिमोट सेंसिंग के उपयोग के उदाहरण

1. **आम (मैंगो) की खेती-** ड्रोन आधारित निगरानी से आम के बागों में जल, पोषण और रोगों की स्थिति का विश्लेषण किया जाता है। समय पूर्व कटाई और रोग नियंत्रण के लिए उपग्रह चित्रण से सहायता मिलती है।
2. **अंगूर की खेती-** अंगूर की बेलों की वृद्धि और स्वास्थ्य का मूल्यांकन करने के लिए मल्टीस्पेक्ट्रल कैमरों का उपयोग किया जाता है। इससे उच्च गुणवत्ता वाले अंगूरों का उत्पादन सुनिश्चित किया जा सकता है।
3. **केला (बनाना) की खेती-** रिमोट सेंसिंग तकनीकों का उपयोग केला उत्पादन क्षेत्रों में कीट और रोग निगरानी के लिए किया जाता है। थर्मल इमेजिंग से केले के पौधों में वायरल संक्रमण का प्रारंभिक पता लगाया जाता है।
4. **संतरा और नींबू वर्गीय फसलों की खेती-** नमी संवेदन और थर्मल सेंसरों की मदद से इन फसलों की जल और पोषक तत्व आवश्यकताओं का अनुमान लगाया जाता है। इससे जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

रिमोट सेंसिंग के लाभ

1. **सटीक कृषि (Precision Farming) को बढ़ावा-** खेतों में हर क्षेत्र की आवश्यकताओं को समझकर सही मात्रा में संसाधनों का उपयोग किया जाता है।
2. **उत्पादन लागत में कमी-** जल, खाद और कीटनाशकों के प्रभावी उपयोग से किसानों की लागत में कमी आती है।

ISSN: 3049-2211

3. **पर्यावरण संरक्षण-** अधिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रयोग को नियंत्रित कर मृदा और जल प्रदूषण को कम किया जा सकता है।
4. **जलवायु परिवर्तन से बचाव-** फसल निगरानी और जोखिम आकलन द्वारा जलवायु परिवर्तन के प्रभाव को कम करने में मदद मिलती है।
5. **जल संसाधनों का कुशल प्रबंधन-** सटीक सिंचाई के माध्यम से पानी की बर्बादी को रोका जा सकता है।
6. **उपज का सही पूर्वानुमान-** यह तकनीक फसल उत्पादन का सही पूर्वानुमान लगाने में मदद करती है, जिससे बाजार की योजना बेहतर बनाई जा सकती है।
7. **फसल बीमा में सुधार-** किसानों के दावों की सटीकता बढ़ती है और बीमा कंपनियां सही निर्णय ले सकती हैं।
8. **कीट और रोग नियंत्रण में सहायक-** प्रारंभिक स्तर पर ही कीट और रोगों का पता लगाकर सही समय पर उपचार किया जा सकता है।
9. **सतत कृषि विकास को बढ़ावा-** यह तकनीक प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग में सहायता करती है।
10. **वैज्ञानिक शोध और डेटा संग्रहण में उपयोगी-** वैज्ञानिक और कृषि विशेषज्ञों को विस्तृत डेटा उपलब्ध कराकर शोध और विकास को गति प्रदान करता है।

निष्कर्ष

रिमोट सेंसिंग तकनीक फलों की खेती में क्रांतिकारी बदलाव ला रही है। यह तकनीक किसानों को अधिक उत्पादन, बेहतर गुणवत्ता और न्यूनतम संसाधन उपयोग की दिशा में कार्य करने में सक्षम बनाती है। भविष्य में, इस तकनीक के और अधिक उन्नत होने की संभावना है, जिससे कृषि क्षेत्र में और भी सकारात्मक परिवर्तन देखे जा सकते हैं। सरकार और वैज्ञानिक संस्थान इस दिशा में कार्य कर रहे हैं ताकि अधिक से अधिक किसान इस तकनीक का लाभ उठा सकें।

रिमोट सेंसिंग का समुचित उपयोग न केवल किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो सकता है, बल्कि यह खाद्य सुरक्षा और सतत कृषि विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

■■■

फसल उत्पादन में प्लास्टिक मल्चिंग की भूमिका

आशीष राय, सुनील कुमार मंडल, धीरेन्द्र कुमार, संजय कुमार
क्षेत्रीय अनुसंधान केंद्र, झंझारपुर, मधुबनी, बिहार
डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविद्यालय, पूसा, समस्तीपुर, बिहार

प्लास्टिक मल्च पौधों के आसपास मिट्टी को ढ़कने में काम आने वाली एक प्लास्टिक फिल्म होती है जो कि विभिन्न फसलों, सब्जियों, फलों इत्यादि की अच्छी वृद्धि विकास एवं उत्पादन के लिए पौधों को अनुकूल परिस्थितियाँ उपलब्ध कराती है। यह पौधों की जड़ में उपस्थित सूक्ष्म जलवायु एवं मिट्टी के तापमान में समन्वय स्थापित करने में मदद करती है। प्लास्टिक मल्चिंग मिट्टी में नमी, तापमान एवं सूक्ष्मजीवी (माइक्रोवियल) सक्रियता की सहायता से फसलों के उत्पादन व गुणवत्ता में वृद्धि एवं फसलों की पूर्व परिपक्वता में सहायक होता है।

प्लास्टिक मल्च के प्रकार एवं कार्य प्रणाली:

1. काली प्लास्टिक मल्च: यह मल्च खरपतवार नियंत्रण के लिए महत्वपूर्ण है। अपारदर्शी होने के कारण सूर्य का प्रकाश भू-सतह तक नहीं पहुँच पाता है और प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया नहीं हो पाती है जिससे खरपतवार पनप ही नहीं पाती है। साथ ही नमी को संरक्षित करती है तथा भूमि का तापमान अनुकूल बनाये रखती है।

2. पारदर्शी प्लास्टिक मल्च: पारदर्शी मल्च में सूर्य का प्रकाश भू-सतह तक पहुँचता है। अतः तापीय उपचार के द्वारा मृदाजनित रोग एवं कुछ खरपतवारों पर नियंत्रण किया जा सकता है। नर्सरी में प्लास्टिक के पारदर्शी मल्च के प्रयोग से रोग रहित शत-प्रतिशत बीजों का अंकुरण किया जा सकता है, खासकर सब्जियों की फसल के लिए अधिक उपयुक्त होते हैं।

3. दो तरफ रंगीन प्लास्टिक मल्च: इस प्रकार की मल्च में बाहरी परत के द्वारा सूर्य का प्रकाश प्रवेश करता है और अन्दरूनी परत के द्वारा विशेष तरंग दैर्ध्य (किसी खास रंग) की किरणें परावर्तित होकर पौधों पर पड़ती है।

ISSN: 3049-2211

(क) पीली/काली प्लास्टिक मल्च: यह मल्च अधिक गर्म के दिनों में भूमि को उच्च तापमान से बचाकर भूमि को अनुकूल तापमान प्रदान करती है।

(ख) चाँदी/काली प्लास्टिक मल्च: चांदी की सतह भूमि को अनुकूल तापक्रम प्रदान करने के साथ ही कुछ एफिड एवं थ्रिप्स जैसे कीटों को प्रतिकर्षित (भगाने) का कार्य करती है, जबकि काली सतह खरपतवार को रोकती है।

(ग) लाल/काली प्लास्टिक मल्च: यह मल्य अर्द्ध पादर्शी (धुंधली) होती है जो सूर्य के प्रकाश को अवशोषित करके भूमि की सतह का तापमान बढ़ाती है। साथ ही सूर्य के प्रकाश को परावितर्त कर पौधो के नीचे की पत्तियों को सूर्य का प्रकाश उपलब्ध कराकर शीघ्र पौधे की वृद्धि, अधिक फूलों का निर्माण तथा पादप निर्माण उपापचय (मेटावोलिज्म) क्रियाओं की गति बढ़ाकर शीघ्र फल का निर्माण और अधिक उत्पादन में सहायक होती है। कुछ प्रयोगों में पाया गया है कि लाल/काली मल्च टमाटर एवं वैगन की फसलों का 20-25 प्रतिशत उत्पादन को बढ़ाने में सहायक होती है।

प्लास्टिक मल्च का चयन:

प्लास्टिक मल्च का चयन उनकी उपयोगिता जैसे खरपतवार नियंत्रण, भूमि का तापमान बढ़ाने एवं कम करने, कीटों एवं बीमारियों की रोकथाम जैसे उद्देश्यों पर निर्भर करता है।

प्लास्टिक मल्च की चौड़ाई ऐसी होनी चाहिए कि फसलों में शष्य क्रियाएं आसानी से की जा सके। सामान्यतया प्लास्टिक मल्च की चौड़ाई 100 से.मी. से 120 से.मी. होती है। प्लास्टिक मल्च की मोटाई फसल के प्रकार एवं फसल की उम्र पर निर्भर करती है। विभिन्न फसलों के लिए प्लास्टिक मल्च की अनुशंसा निम्न प्रकार है:

प्लास्टिक मल्च की मोटाई के अनुसार फसलों का चयन

क्र.सं.	मोटाई (माइक्रोन)	अनुशंसित फसल
1	25-30	लघुकालिक फसलें
2	40-50	द्विवर्षीय-मध्यकालिक फसलें
3	50-100	बहुवर्षय-दीर्घकालिक फसलें

प्लास्टिक मल्च के द्वारा ढ़का जाने वाला क्षेत्रफल

क्र.सं.	ढ़का जाने वाला क्षेत्रफल (प्रतिशत)	अनुशंसित फसल
1	20-25	सभी लतायें एवं रेंगने वाली फसलें
2	40-50	वागवानी फसलों की प्रारंभिक अवस्था
3	40-60	कद्दूवर्गीय फसले एवं फल
4	70-80	सब्जियां एवं पपीता
5	90-100	मृदा अतापीकरण (मिट्टी की सोर्यीकरन एवं भूमिगत हानिकारक कीटों का नियंत्रण)

प्लास्टिक मल्च विछाने की विधि:

प्लास्टिक मल्च को विछाने से पूर्व खेत में खाद डालकर आवश्यक नमी एवं ड्रीप की लाइने लगाने के पश्चात् बेड बनाकर कंकड़, पत्थर, घासफूस, खरपतवार इत्यादि की सफाई करके बेड की लम्बाई के अनुसार आवश्यक प्लास्टिक मल्च (फसलों की आवश्यकता के अनुसार) लेकर उसे एक सिरे पर मिट्टी में 4-6 इंच दबाकर पूरी बेड पर आवश्यक तनाव के साथ फैलाकर दुसरे सिरे पर मिट्टी में दबा दिया जाता है। साथ ही चौड़ाई में भी प्लास्टिक मंच को 4-6 इंच मिट्टी में दबाकर ढ़क दिया जाता है तथा एक आवश्यक गोलाई में पाइप के द्वारा इसमें अनुसंशित पौधे से पौधे के बीच की दूरी के अनुसार छिद्र बना लिये जाते हैं। उक्त छिद्र के बीच में पौधे लगा दी जाती है।

मल्च लगाने का समय:

मल्च लगाने का उपयुक्त समय बसंत ऋतु है, जब मौसम लगातार गर्म रहता है। परन्तु मल्च को बहुत जल्दी नहीं विछाना चाहिए, क्योंकि उभरते हुए बारहमासी पौधों को दवा सकते हैं। खरपतवार निकालने के उपरांत पुरानी मल्च को हटाने के बाद ही दुसरी मल्च लगाना चाहिए। पुरानी मल्च के उपर नई मल्च का उपयोग नहीं करना चाहिए। पतझड़ भी नमी को बनाये रखने और मिट्टी एवं जड़ों को खराब मौसम से बचाने के लिए मल्च विछाने का एक बेहतरीन समय होता है।

मल्चिंग कब और कैसे उपयोग करें:

1. सही समय का चयन: प्लास्टिक मल्चिंग फिल्म का समय सुबह या शाम ही उपयुक्त होता है, जब तापमान कम हो और शीट पर कम दवाब पड़े।

2. सावधानी से विछाएँ: प्लास्टिक की शीट को खीचना नहीं चाहिए, बल्कि धीरे-धीरे विछाना चाहिए, ताकि वह फटे नहीं।

3. सिंचाई और किनारों की व्यवस्था: मल्च शीट के किनारों पर मिट्टी डालकर उसे सुरक्षित कर लेना चाहिए, ताकि हवा से उड़े नहीं।

मल्चिंग का उद्देश्य:

मल्च मिट्टी के तापमान को स्थिर रखने में मदद करेगा, जिससे गर्मी के मौसम में मिट्टी के महत्वपूर्ण लाभकारी सूक्ष्मजीवों के लिए पर्याप्त ठंडी रहेगी। यह भारी वारिश के दौरान उपरी मिट्टी के क्षरण को रोकने में भी मदद करेगा।

ISSN: 3049-2211

प्लास्टिक मल्च के लाभ:

- **भू-नमी संरक्षण:** प्लास्टिक मल्च जल एवं वायुरोधी होती है। भू-नमी वाष्पोत्सर्जन के द्वारा मल्च की अंदरूनी सतह पर जमा होकर पानी बूंदों के रूप में भूमि को पुनः मिल जाता है तथा कम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है।
- **खरपतवार नियंत्रण:** काली (अपारदर्शक) प्लास्टिक मल्च सूर्य के प्रकाश को भूमि की सतह तक जाने से रोकती है जिससे प्रकाश-संश्लेषण नहीं हो पाता है और खरपतवार पनप नहीं पाती है।
- प्लास्टिक मल्च भू-नमी के वाष्पोत्सर्जन को रोककर भूमि के लवणों को भू-सतह पर आने से रोकती है।
- प्लास्टिक मल्च रात के समय में भी उष्ण तापक्रम कायम कर बीजों के शीघ्र अंकुरण एवं नवोदित पौधों की जड़ों का शीघ्र विकास करती है।
- प्लास्टिक मल्च, भूमि व मल्च के मध्य एक सूक्ष्म वातावरण बनाती है जिसमें सूक्ष्मजीवों की सक्रियता बढ़ जाने से कार्बन डाइऑक्साईड का स्तर बढ़ जाता है, जिससे पौधों में प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया तेजी से होती है।
- परावर्त्तक मल्च हानिकारक कीटों को प्रतिकृर्षित कर फसल को सुरक्षा प्रदान करती है।
- प्लास्टिक मल्च के प्रयोग से वर्षा की तेज बूंदों या भारी वर्षा के कारण जल बहाव से होने वाले मृदाक्षरण को रोककर खड़ी फसल को गिरने से बचाया जा सकता हे। परिणामस्वरूप फसल उत्पादन बढ़ता है।
- प्लास्टिक मल्च उत्पादन की गुणवत्ता एवं मात्रा की वृद्धि में सहायक होता है।

प्लास्टिक मल्चिंग से हानिकारक प्रभाव

मल्चिंग के कई फायदे है, परन्तु गलत तरीके से या अधिक मोटी परत का इस्तेमाल करने से कुछ नुकसान भी हो सकते हैं। मल्चिंग के कुछ संभावित हानिकारक प्रभाव इस प्रकार है:

1. जड़ों को ऑक्सीजन की कमी:

- ✓ मल्च की मोटी परत मिट्टी मे हवा के प्रवाह को रोक सकती है।
- ✓ इससे पौधों की जड़ों तक जरूरी ऑक्सीजन नहीं पहुँचा पाती, जिससे पौधे कमजोर हो सकते हैं।

2. जड़ सड़न और फफूंदजनीत रोग:

- ✓ ज्यादा मल्चिंग को मोटी परत से मिट्टी में अतिरिक्त नमी जमा हो जाती है।
- ✓ यह स्थिति जड़ों के सड़ने और फफूंद (कवक) से संबंधित बीमारियों को बढ़ावा दे सकती है।
- ✓ खासकर अगर मल्च पौधे के तने के बहुत करीब डाली जाय तो तना सड़ सकता है।

3. कीट और कृंतक (चूहे जैसे जीव) का प्रकोप:

- ✓ मल्च की मोटी परत कृंतकों जैसे चूहों और अन्य कीटों को छिपने और रहने की जगह देती है।
- ✓ ये जीव पौधों के तनों को कुतर सकते हैं, जिससे पौधों को नुकसान हो सकता है।

4. प्लास्टिक मल्च से प्रदूषण:

- ✓ प्लास्टिक मल्चिंग का इस्तेमाल करने से मिट्टी में छोटे-छोटे माइक्रोप्लास्टिक के कण मिल सकते हैं।
- ✓ ये कण मिट्टी के प्रदूषण का कारण बनते है और लम्बे समय में मिट्टी के जैविक तंत्र को खराब कर सकते हैं।
- ✓ माइक्रोप्लास्टिक मनुष्यों के लिए भी हानिकारक हो सकता है।

5. अत्यधिक तापमान में वृद्धि की संम्भावना

- ✓ अगर मल्चिंग परन्तु बहुत मोटी हो तो यह मिट्टी के तापमान को बहुत ज्यादा बढ़ा सकती है, जिससे सूक्ष्मजीवों (माइक्रोब्स) की वृद्धि अनियंत्रित हो सकती है।

6. पोषक तत्वों का अभाव:

- ✓ बहुत मोटी मल्च का परत डालने पर हल्का पानी देने से भी नमी और पानी मल्च से आगे मिट्टी तक नहीं पहुँच पाता।
- ✓ इससे पौधों को पर्याप्त पानी और पोषक तत्व नहीं मिल पाते।

नुकसान से बचने के लिए सावधानियां

- ✓ मल्च की परत बहुत मोटी न रखें। आमतौर पर 2-3 इंच की मोटी परत पर्याप्त होती है।
- ✓ मल्च को पौधे के तने या पेड़ के तने से थोड़ी दूरी पर रखें, ताकि अधिक नमी के कारण सड़न/गलन न हो।
- ✓ ऑर्गेनिक (जैविक) मल्च का प्रयोग करें और प्लास्टिक मल्च का उपयोग कम से कम करें।

इस प्रकार किसान विभिन्न प्रकार के प्लास्टिक मल्चों का उपयोग कर कम पानी और कुछ विपरीत परिस्थिति में भी अच्छी गुणवत्ता के साथ अधिक उपज प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक कृषि पद्दति में मल्चिंग का महत्व

आधुनिक कृषि में मल्चिंग के महत्व को कम करके नहीं आंका जा सकता, क्योंकि यह कई तरह के लाभ प्रदान करता है जो फसल की पैदावार, मृदा स्वास्थ्य और पर्यावरण स्थिरता को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ाते हैं। मल्चिंग मिट्टी की सतह पर सीधे सुरक्षात्मक सामग्री लगाने की

ISSN: 3049-2211

तकनीक है जो नमी संरक्षण, खरपतवार नियंत्रण, तापमान नियंत्रण आदि में सहायक होता है। इस लेख में मल्चिंग की महत्वपूर्ण भूमिका पर चर्चा की गई है जो निम्न उल्लेखित है:

1. मिट्टी की नमी बनायें रखना और वाष्पीकरण कम करना:

कृषि उत्पादकता के लिए प्रभावी नमी का प्रबंधन आवश्यक है। मल्चिंग सतह के वाष्पीकरण को कम करके मिट्टी की नमी को संरक्षित करने मे मदद करती है। मिट्टी को एक सुरक्षात्मक परत से ढ़कने पर हवा और धूप के सम्पर्क में कम पानी आता है, जिससे वाष्पीकरण कम होता है और फसलों के लिए अधिक स्थिर जल आपूर्ति सुनिश्चित होती है, परिणामतः सिंचाई की आवश्यकता कम हो सकती है, जल संसाधनों का संरक्षण हो सकता है और कृषि जल की खपत कम हो सकती है जो टिकाऊँ खेती की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

2. खरपतवारों का दमन और प्रतिस्पर्धा को कम करना:

कृषि पद्तियों में खरपतवारों की वृद्धि को नियंत्रित करने में मल्चिंग एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। खरपतवार पानी, पोषक तत्वों और सूर्य के प्रकाश जैसे संसाधनों के लिए फसलों से प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिससे उपज और यहाँ तक कि फसल की गुणवत्ता भी कम हो जाती है। मल्च की परत एक भौतिक अवरोध का काम करती है, जो सूर्य के प्रकाश को रोकती है, जिससे खरपतवारों का अंकूरण और वृद्धि वाधित होती है। मल्चिंग न केवल अपनी इच्छित फसलों के लिए मूल्यवान संसाधनों की बचत करती है, बल्कि हानिकारक रासायनिक खरपतवारनाशकों की आवश्यकता को भी कम करती है, जिससे पर्यावरण के अनुकूल कृषि कार्य में प्रभावी योगदान मिलता है।

3. मिट्टी को तापरोधी (इन्सुलेट) बनाना और तापमान को नियंत्रित करना:

मिट्टी के तापमान में उतार-चढ़ाव पौधों की वृद्धि और फसल की उपज को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। मल्चिंग मिट्टी को तापरोधी (इन्सूलेशन) प्रदान करके तापमान को स्थिर रखने में मदद करती है। गर्म महीनों में मल्च की परत सीधी धूप को रोक कर उष्मा के स्थानान्तरण को अबरूद्ध कर मिट्टी को ठंडा रख सकती है। इसके विपरीत, ठंडे महीनों में मल्च उष्मा के नुकसान को रोककर गर्मी बनाए रखने में मदद कर सकती है। मिट्टी का अधिकत्तम तापमान बनायें रखने पर अंकूरण और विशेष परिस्थितियों में सुधार होता है, जिससे स्वस्थ्य फसलें और उपज क्षमता में वृद्धि होती है।

4. मृदा उर्वरता और स्वास्थ्य में वृद्धि:

जैविक मल्च के मामले में उनके अपघटन की प्रक्रिया समय के साथ मिट्टी की उर्वरता को सक्रिय रूप से लाभ पहुँचाती है। जैसे-जैसे जैविक मल्च विघटित होते हैं, वे मिट्टी में नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाशियम जैसे आवश्यक पोषक तत्वों को छोड़ते हैं। इसके अतिरिक्त, कार्बनिक पदार्थों के अपघटन से मिट्टी की संरचना मे सुधार होता है, वायु का संचार बढ़ता है और लाभकारी सूक्ष्मजीवों की वृद्धि को बढ़ावा मिलता है, जो बदले में मिट्टी के स्वास्थ्य में अधिक योगदान करते है। इष्टतम मृदा स्वास्थ्य का अर्थ है, फसलों की वृद्धि और विकास के लिए बेहतर वातावरण।

5. मृदा अपदरन और जल अपवाह/प्रवाह को रोकना:

खुली मिट्टी, हवा और पानी की अधिक प्रवाहो से मिट्टी की कटाब के प्रति अधिक संवेदनशील होती है। मल्चिंग मिट्टी को इन ताकतों से बचाती है, जिससे उसकी स्थिरता बनी रहती है और मूल्यवान उपरी मिट्टी की रक्षा होती है। बारिश की बूंदों के प्रभाव को कम करके, मल्चिंग मिट्टी के संघटन को कम करती है, पानी के बहाव को धीमा करती है और जमीन में पानी के रिसाव को बढ़ावा देती है। इससे न केवल बहुमूल्य मृदा संसाधनों का संरक्षण होती है, बल्कि आस-पास के जल निकायों को प्रदूषित करने वाले अपवाह द्वारा बहायें गये महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की क्षति को भी रोका जा सकता है।

6. एक सहायक पारिस्थितिकी तंत्र को प्रोत्याहित करना:

मृदा स्वास्थ, उसमें रहने वाले लाभकारी सुक्ष्मजीवों, कीटों और अन्य महत्वपूर्ण जीवों के जटिल पारिस्थितिकी तंत्र के अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। जैविक मल्च, विशेष रूप से इन मृदा निवासी जीवों के लिए एक अनुकूल वातावरण प्रदान करते हैं। केंचुए सूक्ष्मजीव और अन्य लाभकारी कीट अच्छी तरह से मल्च की गई मिट्टी में पनपते है, अपनी प्राकृतिक प्रतिक्रियाओं के माध्यम् से कार्बनिक पदार्थों को विघटित करते हैं और मृदा संरचना को बेहतर बनाते हैं। ये जीव एक स्वस्थ मृदा पारिस्थितिकी तंत्र को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, जिससे अच्छी फसल की वृद्धि और बेहतर उपज को बढ़ावा मिलता है।

7. कीट और रोग नियंत्रण को सुविधाजनक बनाना:

मल्चिंग कृषि पद्धतियों में कीटों और बीमारियों के नियंत्रण में सहायक हो सकती है। परावर्तक (पारदर्शी) मल्चिंग सूर्य के प्रकाश को जमीन से दूर भेजकर कीटों को दूर भगाती है, उनके व्यवहार को वाधित करती है और उपयुक्त पोषक पौधे खोजने की उनकी क्षमता को कम करती है। कीट- शिकारी (परभक्षी) कीटों के लिए आवास के रूप में काम कर सकते हैं, जिससे कीट नियंत्रण के एक प्राकृतिक रूप को बढ़ावा मिलता है। इसके अतिरिक्त, मल्चिंग एक भौतिक अवरोध प्रदान करके और मिट्टी को पौधों की पत्तियों पर छीटे पड़ने से रोककर, जो रोगजनकों को आश्रय दे सकती है, मृदाजनित रोगों को रोकने में मदद कर सकती है।

8. स्थिता और पर्यावरण-मित्रता को बढ़ावा देना:

कृषि में मल्चिंग पद्धतियों को शामिल करना टिकाक खेती और पर्यावरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। जल संरक्षण, रसायनों के उपयोग में कमी, मृदा अपरदन (ईरोजन) को न्यूनतम करने और जैव विविधता को बढ़ावा देकर, मल्चिंग फसलों की उत्पादकता और पारिस्थितिकी तंत्र के स्वास्थ्य, दोनों पर स्थायी और सकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। तेजी से बदलती दुनियां में दीर्घकालिक खाद्द सुरक्षा और लचीलापन सुनिश्चित करने के लिए टिकाऊ कृषि का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

इस प्रकार उपरोक्त विभिन्न लाभों से यह स्पष्ट होता है कि मल्चिंग आधुनिक कृषि में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है, जो फसलों के पैदावार की सुरक्षा करते हुए पर्यावरण के प्रति जागरूकता को बढ़ावा देती है। अतः मल्चिंग के महत्व को समझकर और उपयुक्त तकनीकों को अपनाकर किसान एक अधिक संवल, स्वस्थ और टिकाऊ कृषि का कार्य प्राप्त कर सकते हैं।

जैव ईंधन: ऊर्जा का एक टिकाऊ तंत्र

शिवानी चौहान- सहायक प्रोफेसर, मृदा विज्ञान विभाग,कॉलेज ऑफ हॉर्टिकल्चर एंड फॉरेस्ट्री, नेरी, हमीरपुर (हि.प्र.)
शालिनी ठाकुर- स्नातकोत्तर छात्रा, फल विज्ञान विभाग, कॉलेज ऑफ हॉर्टिकल्चर एंड फॉरेस्ट्री, नेरी, हमीरपुर (हि.प्र.)
नीरज संख्यान- सहायक प्रोफेसर, मूल विज्ञान विभाग, कॉलेज ऑफ फॉरेस्ट्री, डॉ. वाई.एस. परमार बागवानी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, नौणी, (हि.प्र.)

जैव ईंधन बायोमास से निर्मित एक अक्षय, जैव निम्नीकरणीय ईंधन है। बायोफ्यूल (जैवईंधन) ऐसे नवीकरणीय ईंधन होते हैं जो पौधों, शैवाल (Algae) और जैविक अपशिष्ट जैसे जैविक पदार्थों से प्राप्त किए जाते हैं। ये बायोमास से निर्मित होते हैं और परिवहन, बिजली उत्पादन तथा हीटिंग में जीवाश्म ईंधनों के विकल्प के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं। उदाहरण: एथेनॉल (शुगर और वसा से), बायो डीज़ल (वनस्पति तेल या पशु वसा से), बायोगैस, बायो-हाइड्रोजन, बायो-ऑयल आदि। इन ईंधनों को परिवहन और ऊर्जा उत्पादन के लिए एक टिकाऊ विकल्प माना जाता है, क्योंकि इनके स्रोत पदार्थों की पुनः पूर्ति की जा सकती है, तथा ये सामान्यतः कम ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन करते हैं।

जैव ईंधन ठोस, द्रव या गैसीय प्रकृति के हो सकते हैं:

- ✓ **ठोस**: लकड़ी, सूखे पौधे और खाद
- ✓ **तरल**: बायोएथेनॉल और बायोडीज़ल
- ✓ **गैसीय**: बायोगैस

प्रकार

लकड़ी, भूसा और घरेलू कचरे का उपयोग ऊष्मा और ऊर्जा के स्रोत के रूप में किया जाता है। जैवईंधन का उत्पादन पशुवसा, पौधों के अपशिष्ट और जीवित जीवों से उत्पन्न अन्य जैविक अपशिष्टों से भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिए बायोइथेनॉल, बायोडीज़ल, बायोगैस।

उत्पादन

जैवईंधन उत्पादन प्रक्रिया को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है।

पहली पीढ़ी

पहली पीढ़ी के बायोफ्यूल को पारंपरिक (कन्वेंशनल) बायोफ्यूल भी कहा जाता है। ये शक्कर, स्टार्च या वनस्पति तेल जैसी चीज़ों से बनाए जाते हैं। ध्यान दें कि ये सभी खाद्य पदार्थ हैं। स्टार्च-आधारित (जैसे आलू, मक्का, जौ और गेहूँ) तथा चीनी-आधारित (जैसे

ISSN: 3049-2211

गन्ना और शुगर बीट) फीड स्टॉक पहले-पीढ़ी के बायोफ्यूल के उत्पादन में उपयोग किए जाने वाले मुख्य घटकहैं। इन फीडस्टॉक्स का अनूठा लाभ यह है कि ये आसानी से उपलब्ध होते हैं, और इनकी रूपांतरण प्रक्रियाएँ भी उतनी ही सरल हैं। नवीकरणीय फीड स्टॉक्स से उत्पादित डीज़ल, जिसमें लंबी-श्रृंखला वाले फैटी एसिड एस्टर युक्त लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास शामिल है, अल्कोहल किण्वन के माध्यम से, एंजाइम और सूक्ष्मजीव बायोअल्कोहल को सेल्यूलोज़, ग्लूकोज़, स्टार्च, पॉलीसैकेराइड और अन्य शर्कराओं से अलग करते हैं। नवीकरणीय फीडस्टॉक्स से उत्पादित डीज़ल, जिसमें लंबी-श्रृंखला वाले फैटी एसिड किण्वन के माध्यम से, एंजाइम और सूक्ष्मजीव बायोअल्कोहल को सेल्यूलोज़, ग्लूकोज़, स्टार्च, पॉलीसैकेराइड और अन्य शर्कराओं से अलग करते हैं। नवीकरणीय फीडस्टॉक्स से उत्पादित डीज़ल, जिसमें लंबी-श्रृंखला वाले फैटी एसिड एस्टर युक्त लिग्नोसेल्यूलोसिक बायोमास शामिल है, बायोडीज़ल कहलाता है। वसा, सोयाबीन तेल, या अन्य वनस्पति तेल जैसे लिपिड अल्कोहल के साथ अभिक्रिया करके मिथाइल, इथ्रेल, या प्रोपाइल एस्टर बनाते हैं, जिनका उपयोग बायोडीज़ल बनाने में किया जाता है। ऑक्सीजन रहित सूक्ष्मजीवी संघों द्वारा अवायवीय पाचन से पोषक तत्वों से भरपूर डाइजेस्टेट और बायोगैस प्राप्त होती है। ठोस जैव ईंधन बनाने के लिए जैसे लकड़ी, लकड़ी के टुकड़े, पत्ते, चूरा, लकड़ी का कोयला और गोबर जैसी कच्ची सामग्रियों का उपयोग किया जाता है। आम प्रथम पीढ़ी के जैव ईंधनों में बायोएल्कोहल, बायोडीजल, वनस्पति तेल, बायोईथर, बायोगैस शामिल हैं।

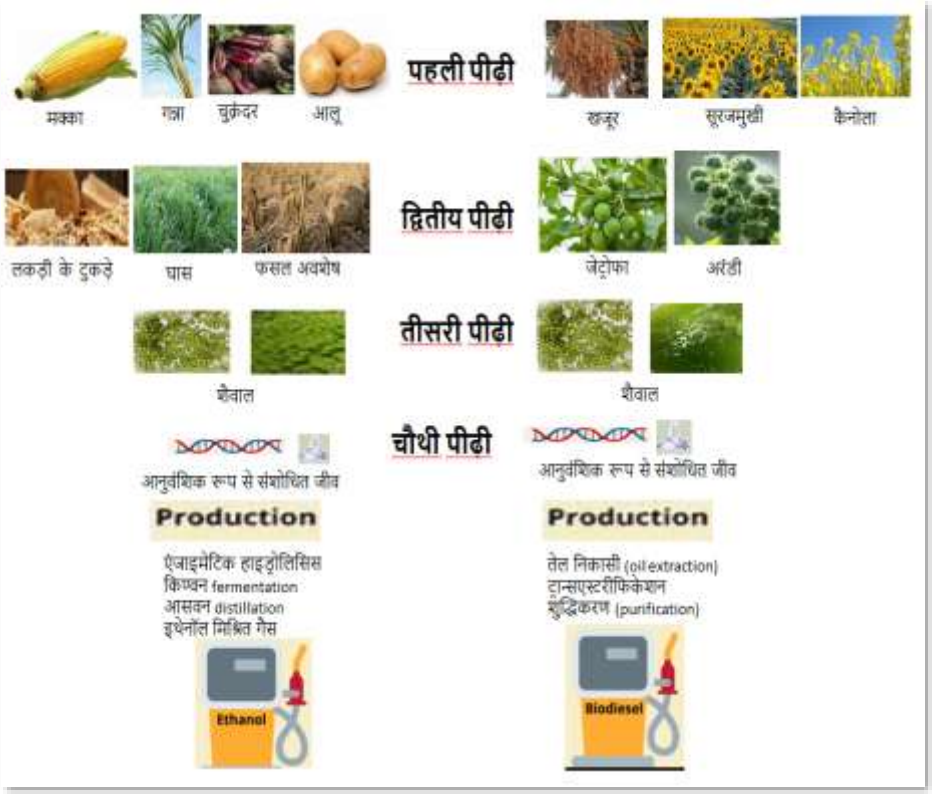

द्वितीय पीढ़ी

द्वितीय पीढ़ी के बायोफ्यूलटिकाऊ (सस्टेनेबल) फीडस्टॉक से बनाए जाते हैं। कोई भी दूसरी पीढ़ी का बायोफ्यूल खाद्य फसल नहीं होता, हालांकि कुछ खाद्य पदार्थ उपभोग योग्य न रहने पर दूसरी पीढ़ी के बायोफ्यूल के रूप में उपयोग किए जा सकते हैं । दूसरी पीढ़ी के बायोफ्यूल को अक्सर एडवांस्ड बायोफ्यूल कहा जाता है। बायोफ्यूल गैर-खाद्य पौध सामग्री से बनाए जाते हैं, जैसे पौधों का शुष्क पदार्थ, लकड़ी आधारित बायोमास, या कृषि अवशेष और अपशिष्ट। उदाहरणों में से लूलोज़एथेनॉल, बायोडीज़ल शामिल हैं। ऐसे ईंधन बनाने के लिए ऊष्मा रासायनिक अभिक्रियाएँ या जैवरासायनिक रूपांतरण प्रक्रियाएँ उपयोग की जाती हैं। साथ ही यह भी बताया गया है कि ये बायोफ्यूल पहली पीढ़ी के बायोफ्यूल की तुलना में कम ग्रीनहाउस गैसें उत्सर्जित करते हैं।

तीसरी पीढ़ी

तीसरी पीढ़ी के बायोफ्यूल मुख्य रूप से शैवाल (algae) और सूक्ष्म जीवों से उत्पादित किए जाते हैं। यह श्रेणी जल निकायों की शुद्धिकरण प्रक्रिया में भी लाभदायक है, जिससे जल प्रदूषण कम करने में सहायता मिलती है। सूक्ष्मजीव एनारोबिक डाइजेशन (ऑक्सीजन रहित अपघटन) के माध्यम से बायोसिंथेटिक नैचुरल गैस (Bio-SNG) का उत्पादन कर सकते हैं। बायो-SNG का उपयोग वाहनों में CNG या LNG के रूप में तथा प्राकृतिक गैस सिलिंडरों को भरने में किया जाता है। उदाहरण: ब्यूटेनॉल।

चौथी पीढ़ी

चौथी पीढ़ी के बायोफ्यूल उन फसलों से उत्पादित किए जाते हैं जिन्हें जीनसंशोधित किया गया होता है ताकि वे बड़ी मात्रा में कार्बनअवशोषित कर सकें। जीनसंशोधन का उद्देश्य फोटोसिंथेटिक दक्षता और प्रकाश प्रवेश में सुधार करना होता है। इसके बाद द्वितीय-पीढ़ी की तकनीकों का उपयोग करके फसलों को ईंधन में परिवर्तित किया जाता है। ईंधन को पूर्व-दहन के दौरान कार्बन को पकड़ा जाता है। इसके बाद कार्बन को भू-संग्रहित किया जाता है, यानी इसे ऐसे कोयला खनिजों

ISSN: 3049-2211

में रखा जाता है जिन्हें खनन नहीं किया जा सकता या समाप्त तेल या गैस क्षेत्रों में रखा जाता है। चूंकि इनका निर्माण वातावरण से कार्बन को हटा देता है, इसलिए इन ईंधनों में से कुछ को कार्बन-नकारात्मक माना जाता है। बायोफ्यूल उत्पादन में सुधार के लिए मॉलिक्यूलर बायोलॉजी, जेनेटिक इंजीनियरिंग और बहुविषयक भौतिक-रासायनिक विधियों का उपयोग किया जाता है, जिस में शैवाल में जीन परिवर्तन के लिए CRISPR/Cas9 और guided RNA शामिल हैं।

उपयोग

- ✓ **परिवहन**: पेट्रोल और डीज़ल के विकल्प के रूप में उपयोग, जिसमें वाहनों में एथेनॉल और बायोडीज़ल का मिश्रण और विमानों के लिए सस्टेनेबल एविएशन फ्यूल (SAF) शामिलहै।
- ✓ **विद्युत उत्पादन:** ग्रामीण और दूरदराज के क्षेत्रों को ऊर्जा प्रदान करने के लिए बायोगैस या बायोमास बिजली संयंत्रों में उपयोग किया जाता है।
- ✓ **कृषि एवं ग्रामीण विकास:** कृषि अवशेषों का उपयोग करता है तथा किसानों और ग्रामीण समुदायों के लिए आय प्रदान करता है।
- ✓ **पर्यावरणीय लाभ**: जल निकायों (विशेष रूप से तीसरी पीढ़ी के जैव ईंधन) को शुद्ध करने में मदद करता है और ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन को कम करता है।
- ✓ **खाना पकाने और घरेलू उपयोग:** बायोगैस स्टोव और जैव-संपीडन प्रणालियों में उपयोग किया जाता है।
- ✓ **औद्योगिक उपयोग**: हीटिंग, भट्टियों के लिए ईंधन के रूप में और औद्योगिक प्रक्रियाओं के लिए ऊर्जा स्रोत के रूप में उपयोग किया जाता है।

लाभ

- ✓ **उपलब्धता:** जैव ईंधन नवीकरणीय हैं क्योंकि वे बायोमास से उत्पादित होते हैं।
- ✓ **स्रोत सामग्री:** बायोफ्यूल विभिन्न सामग्रियों से बनाए जा सकते हैं जैसे कि फसल अपशिष्ट, गोबर और अन्य उप उत्पाद, जबकि तेल सीमित संसाधन है।
- ✓ **पर्यावरणीय प्रभाव:** बायोफ्यूल जीवाश्म ईंधन की तुलना में कम कार्बन उत्सर्जित करते हैं और नगरपालिका ठोस अपशिष्ट प्रबंधन में मदद करते हैं, हालांकि फसलों की खेती में उपयोग किए गए उर्वरक ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन कर सकते हैं।

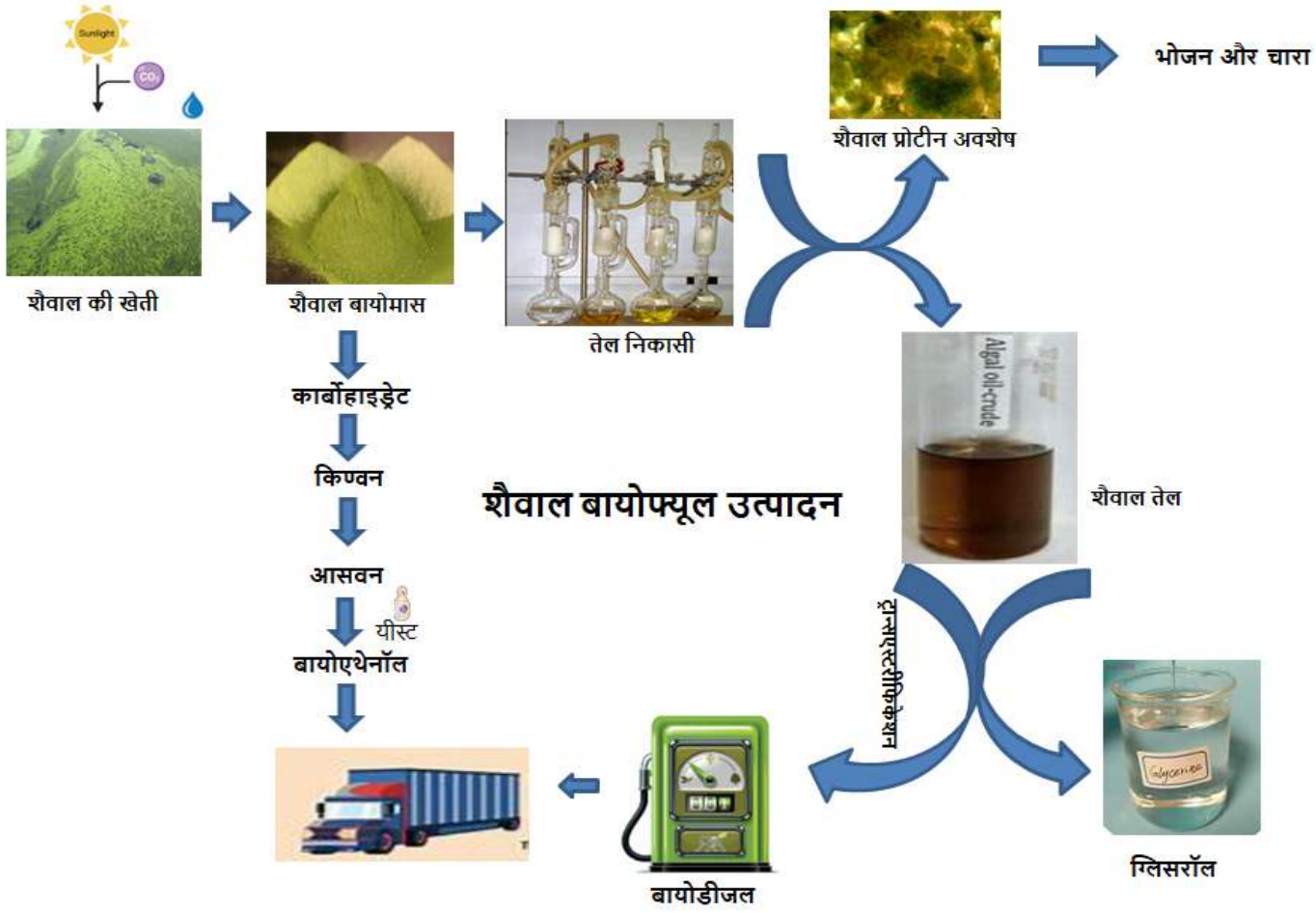

ISSN: 3049-2211

- ✓ **सुरक्षा:** स्थानीय उत्पादन विदेशी ऊर्जा पर निर्भरता कम करता है और राष्ट्रीय ऊर्जा सुरक्षा बढ़ाता है।
- ✓ **आर्थिक लाभ:** स्थानीय बायोफ्यूल उत्पादन रोजगार सृजित करता है और उपयुक्त फसलों की मांग बढ़ाकर कृषि अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित करता है।

समस्याएँ

- ✓ **कुशलता:** जीवाश्म ईंधन बायोफ्यूल की तुलना में अधिक ऊर्जा उत्पन्न करते हैं (जैसे, 1 गैलनएथेनॉल से कम ऊर्जा मिलती है बनिस्बत 1 गैलन पेट्रोल के)।
- ✓ **लागत:** बायोफ्यूल उत्पादन के लिए भूमि की आवश्यकता होती है, जिससे लागत बढ़ती है और खाद्य फसलों की कीमतों पर असर पड़ सकता है।
- ✓ **जैव विविधता:** अधिक बायोफ्यूल फसलें उगाने से किसानों को वाणिज्यिक लाभ होने के बावजूद जैव विविधता कम हो सकती है।
- ✓ **खाद्य संकट:** ईंधन फसलें उगाने के लिए कृषि भूमि का उपयोग खाद्य कीमतें बढ़ा सकता है और भोजन की कमी का जोखिम पैदा कर सकता है।
- ✓ **पानी का उपयोग:** जैव ईंधन फसलों की सिंचाई और ईंधन उत्पादन के लिए जल की आवश्यकता होती है, जिससे स्थानीय संसाधनों पर दबाव पड़ता है।

निष्कर्ष

जैव ईंधन सतत एवं पर्यावरण-अनुकूल ऊर्जा स्रोत के रूप में जीवाश्म ईंधनों पर निर्भरता को कम करने, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन घटाने तथा कृषि अपशिष्टों के प्रभावी उपयोग में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। जैवईंधन उत्पादन से प्राप्त उप-उत्पाद मृदा उर्वरता, मृदा जैविक कार्बन और सूक्ष्मजीवी गतिविधि को बढ़ाकर सतत कृषि को प्रोत्साहित करते हैं, साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन और किसानों की आय में वृद्धि में भी सहायक होते हैं। यद्यपि खाद्य-ईंधन प्रतिस्पर्धा, उच्च उत्पादन लागत, तकनीकी सीमाएँ और संसाधन प्रबंधन जैसी चुनौतियाँ इनके व्यापक प्रसार में बाधक हैं, फिर भी उन्नत तकनीकों पर आधारित द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ पीढ़ी के जैव ईंधन, उचित नीतिगत समर्थन और मृदा-अनुकूल कृषि प्रबंधन के साथ, भविष्य में सतत कृषि एवं ऊर्जा सुरक्षा के लक्ष्यों को एक साथ प्राप्त करने का एक प्रभावी और व्यवहार्य समाधान प्रस्तुत करते हैं।

****

कृषक मंच - मार्च 2026 संस्करण

लोकप्रिय लेखों के लिए आमंत्रण

वेबसाइट: krishakmanch.com

अंतिम तिथि: 28 मार्च 2026

लेख के विषय:

- कृषि विज्ञान के प्रमुख क्षेत्र: एग्रोनॉमी, बागवानी, कीट विज्ञान, रोग विज्ञान, कृषि प्रसार, कृषि अर्थशास्त्र, जैव प्रौद्योगिकी आदि।
- नवीनतम कृषि तकनीकें।
- फसल प्रबंधन एवं रोग नियंत्रण।
- जैविक खेती एवं प्राकृतिक कृषि।
- जल संरक्षण व सिंचाई तकनीकें।
- सरकारी योजनाएं।

हमारे व्हाट्सएप समूह से जुड़ें:

Whatsaap
Clik to Chat